श्रीकृष्ण-सन्देश



वर्ष ७ : अंक ६

नीतिवचनामृत

भैषज्यमेतद् दुःखस्य यदेतन्नानुचिन्तयेत् ।
चिन्त्यमानं हि चाभ्येति भूयश्चापि प्रवर्तते ॥ १ ॥

दुखकी ओषधि एक यह चिन्ता कीजै नांय ।
चिन्तन ते आवत निकट पुनि-पुनि अति अधिकाय ॥

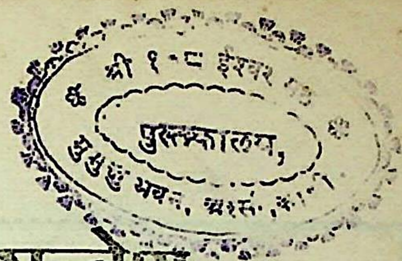
प्रज्ञया मानसं दुःखं हन्याच्छारीरमौषधैः ।
एतद्विज्ञानसामर्थ्यं न बालैः समतामियात् ॥ २ ॥

मन दुख मतिसों मेटिये तन दुख औषध खाय ।
नहिं कादर सम रोइये ज्ञान-शक्ति यह पाय ॥

अनित्यं यौवन रूपं जीवितं द्रव्यसंचयः ।
आरोग्यं प्रियसंवासो गृध्येत्तत्र न पण्डितः ॥ ३ ॥

धन सुरूप यौवन अरुज जीवन प्रिय-संवास ।
थिर न रहैं बुध जन करैं नहिं इनकी अभिलास ॥





श्रीकृष्ण-सन्देश

धर्म, अध्यात्म, साहित्य एवं संस्कृति-प्रधान मासिक

प्रवर्तक

ब्रह्मलीन श्री जुगलकिशोर बिरला

संख्या

वर्ष : ७, अङ्क : ६

जनवरी, १९७२

श्रीकृष्ण-संवत् : ५१९७

शुल्क

वार्षिक : ७ रु०

आजीवन : १५१ रु०

प्रबन्ध-सम्पादक

देवधर शर्मा

प्रकाशक :

श्रीकृष्ण-जन्मस्थान-सेवासंघ, मथुरा

दूरभाष : ३३८

'श्रीकृष्ण-सन्देश'के उद्देश्य तथा नियम

उद्देश्य : धर्म, अध्यात्म, भक्ति, साहित्य एवं संस्कृति-सम्बन्धी लेखों द्वारा जनताको सुपथपर चलनेकी प्रेरणा देना और जनमानसमें सदाचार, सद्विचार, राष्ट्रप्रेम, आस्तिक्य, समाजसेवा, सर्वाङ्गीण समुन्नति तथा युगके अनुरूप कर्तव्यबोध जाग्रत् करना 'श्रीकृष्ण-सन्देश' का शुभ उद्देश्य है।

• नियम : उद्देश्यमें कथित विषयोंसे संबद्ध श्रुति, स्मृति, पुराण आदिके अविरुद्ध तथा आक्षेपरहित एवं लोककल्याणमें सहायक लेख ही इस पत्रिकामें प्रकाशित होते हैं। लेखोंमें काट-छांट, परिवर्तन-परिवर्धन आदि करने अथवा उन्हें न छापनेका संपूर्ण अधिकार सम्पादकका है। अस्वीकृत लेख बिना माँगे नहीं लौटाये जाते। वापसीके लिए टिकट भेजना अनिवार्य है। लेखमें प्रकाशित विचारके लिए लेखक ही उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

लेखक उद्देश्यमें निर्दिष्ट विषयपर ही उत्तम विचारपूर्ण लेख भेजें। लेख स्वच्छ और सुपाठ्य अक्षरोंमें कागजके एक ही पृष्ठपर बायें हाशिया छोड़कर लिखा होना चाहिए। लेखका कलेवर अधिक बड़ा न रहे। सामग्री सुन्दर, सामयिक तथा प्रेरणाप्रद हो। लेख 'सम्पादक' 'श्रीकृष्ण-सन्देश' रू० नं० ६, कैलगढ़ कालोनी, जगतगंज, वाराणसीके पतेपर भेजें।

• 'श्रीकृष्ण-सन्देश' अगस्त माससे प्रारम्भ होकर प्रत्येक मासकी पहली तारीखको प्रकाशित होता है, इसका वार्षिक मूल्य ७) है। जो लोग एक सौ इक्यावन रुपये एक साथ एकबार जमा कर देते हैं, वे इसके आजीवन ग्राहक माने जाते हैं। उन्हें उसी चंदेमें उनके जीवनभर 'श्रीकृष्ण-सन्देश' मिलता रहेगा।

ग्राहकको अपना नाम पता सुस्पष्ट लिखना चाहिए। ७) चंदा मनि-आर्डर द्वारा अग्रिम भेजकर ग्राहक बनना चाहिए। वी० पी० द्वारा अंक जानेमें अनावश्यक विलम्ब तथा व्यय होता है।

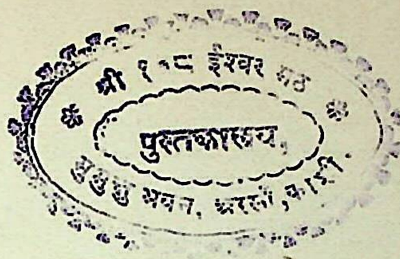
• विज्ञापन : इसमें उत्तमोत्तम समाजोपयोगी वस्तुओंका ही विज्ञापन दिया जाता है। अश्लील, जादू-टोने आदि तथा मादक द्रव्योंके विज्ञापन नहीं छपते। विज्ञापन पूरे पृष्ठपर छपनेके लिए ५००) रुपये तथा आधे पृष्ठपर छपनेके लिए ३००) रुपये भेजना अनिवार्य है।

पत्र-व्यवहारका पता :

व्यवस्थापक—'श्रीकृष्ण-सन्देश'

श्रीकृष्ण-जन्मस्थान-सेवासंघ

मथुरा



अ नु क्र म

मासिक व्रत, पर्व एवं महोत्सव

[संवत् २०२८ माघ शुक्ल प्रतिपद् सोमवार १७ जनवरी १९७२ से फाल्गुन कृष्ण ३० सोमवार १४ फरवरी १९७२ तक]

जनवरी : १९७२ ई०

तिथि	वार	दिनाङ्क	व्रत-पर्व
२१	शुक्र		वसन्तपञ्चमी।
२२	शनि		रथसप्तमी, अचलासप्तमी।
२६	बुध		जया एकादशीव्रत, सबके लिए। गणतन्त्र-दिवस।
२७	गुरु		प्रदोष-व्रत।
२९	शनि		पौर्णिमा, व्रतके लिए
३०	रवि		माघ-पूर्णिमा ग्रस्तोदिन खण्डग्रास चन्द्रग्रहण स्पर्श : २.४३। मोक्ष : ६.८ स्टै० टा० (दिनमें)

फरवरी : १९७२ ई०

२	बुध		संकष्टी गणेशचतुर्थी व्रत।
७	सोम		सीताष्टमी।
९	मंगल		श्री समर्थ रामदासनवमी (पुण्यतिथि)।
११	शुक्र		विजया एकादशी व्रत, सबके लिए।
१२	शनि		प्रदोष-व्रत।
१६	रवि		महाशिवरात्रि व्रत। कुम्भ-संक्रान्ति।
१४	सोम		अमावास्या, दर्श।

श्रीकृष्ण जन्म-स्थान :

प्रत्यक्षदर्शियोंके भावभीने शब्द-सुमन

(जनवरी १९७२)



भगवान् श्रीकृष्णके पुण्य जन्मस्थलका दर्शन करके हम सब कृतकृत्य हुए। इसे साफ-सुथरा और सुचारु रूपसे रखा गया है, यह देखकर प्रसन्नता हुई।

विद्याचरण शुक्ल
मंत्री भारत-शासन, नयी दिल्ली

मैंने श्रीकृष्ण-जन्मस्थानका दर्शन आज फिर यहाँ किया। हर बार नयी प्रेरणा और स्फूर्ति मिलती है। स्मारककी भव्यता मुझे जँची। मुझे विश्वास है कि स्मारकका काम पूरा हो जानेपर इसकी उदात्तता भी बढ़ेगी। इसके पास-पड़ोसका वातावरण भी इसकी समताका ही होना चाहिए। इसके लिए सबको धर्मनिरपेक्ष भावसे योगदान करना चाहिए।

सुधाकर पाण्डेय (संसत्सदस्य)
प्रधानमंत्री, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

भगवान् कृष्णका जन्मस्थान स्वयं एक तीर्थ है। इसका दर्शन पुण्योंका फल है। इस स्थानपर पुण्य-स्मारकका निर्माण भारतीय संस्कृतिको सुरक्षाकी ओर एक अपूर्व कदम है। हम सब उसके लिए यथाशक्ति सहयोग प्रदान करेंगे।

रामपाल सिंह
सहायक आबकारी कमिश्नर, आगरा

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे इस पुण्य-स्थलका पुनः दर्शन मिला। वस्तुतः यहाँ आनेपर हृदय प्रसन्न होता है। मेरे इस बार आनेपर इस पुण्य-कल्पकी बढ़ोत्तरी हुई है। इच्छा यही है, यह जल्दीसे जल्दी भगवदाकार हो जाय। यह उन्हींके कृपासे सम्भव है। किन्तु कल्पमें हम सब हिन्दू और उदार हृदय सज्जनका योगदान हो, इस विचारसे मैं सबसे विनम्र निवेदन करता हूँ कि यथाशक्ति सेवा करें। सेवा धनसे ही नहीं, चित्त-शुद्धि और श्रीकृष्ण-सन्देशके प्रसारसे भी हो सकती है। बस, सब तत्परक हो जायँ। श्रीकृष्ण-कृपा !

हरिमाधवशरण
सिटी मजिस्ट्रेट, आगरा

कई वर्षों बाद भगवान् श्रीकृष्णके जन्मस्थानको देखकर जो प्रसन्नता मुझे हुई, उसे व्यक्त करना सम्भव नहीं। इस पावन-स्थलका जीर्णोद्धार उचित ढंगसे किया गया है।

यहाँ दर्शकोंकी संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है, यह बड़ी प्रसन्नताकी बात है। श्रीकृष्ण-जन्मस्थान भारत-भूमिका अत्यन्त गौरवमय स्थल है। आशा है, इसे धर्म और संस्कृतिका उच्च प्रतिष्ठान बननेका गौरव प्राप्त होगा।

कृष्णदत्त वाजपेयी
अध्यक्ष, प्राचीन इतिहास, संस्कृति, पुरातत्त्व,
सागर विश्वविद्यालय, सागर (म० प्र०)

We are extremely happy to see this memorial of the Indian history and culture. Long live Indian people.

A. Volpex, V. Romance
Moscow, U. S. S. R.

This is a very interesting place to see. It helps to understand the creed of the people. I wish the work of new construction good luck.

Gerold Von Brannmi

Bonn Adenanorattee German Embassy, New Delhi

This is one of the most beautiful places of India.

Simai Mihaly etc.
Hungarian Peace Delegation Budapest

We admire all in this marvellous country. We are spell bound by everything. Lucky we are to have been here.

Thank you.

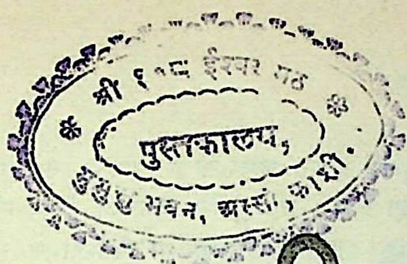
French Group
Paris

It was an honour to visit Lord Krishna's Birth place. May His New Tempe be built soon and inspire us all with peace & tolerance.

Margrit & Henery Turner
Yorkville, Illinois U. S. A.

It was a great pleasure for me to attend a special meeting at Janma Bhoomi on 30.11.71.

A. C. Bhaktivedanta Swami
International Society for Krishna Conscienceness
Los Angelsle, U. S. A.



श्रीकृष्ण-सन्देश

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे॥

वर्ष : ७] मथुरा, जनवरी १९७२ [अङ्क : ६

विजय

धर्मयुद्धमें विजय अवश्य प्राप्त होती है, क्योंकि उसमें धर्मकी अदम्य शक्तिका सहयोग प्राप्त रहता है। जो युद्ध अनिच्छा या दैवेच्छासे हमारे ऊपर लद जाय—अवश्य-कर्तव्यके रूपमें प्राप्त हो जाय, वह 'धर्मयुद्ध' है और उसे भगवान्की आज्ञा समझकर हमें स्वीकार करना चाहिए। जहाँ तुच्छ स्वार्थके लिए नहीं, आर्त या पीडित जनोंके उद्धारके लिए, परहितके सम्पादनके लिए अथवा दुःशासनकी दोषपूर्ण दमन-नीतिसे दलित। कराहती मानवताके परित्राणके लिए युद्धमें प्रवृत्ति होती है; वह युद्ध 'युद्ध' न रहकर मुझ परमेश्वरकी समाराधनाका पुण्य कार्य बन जाता है। जहाँ युद्ध-यज्ञ द्वारा मुझ यज्ञपुरुषका यजन होता है, वहाँ मुझ यज्ञभोक्ता महेश्वरकी उपस्थिति अवश्य होती है। यों तो मैं सर्वत्र हूँ, पर जहाँ उक्त यज्ञको भावना है; वहाँ मैं उस यज्ञकी सफलताके लिए विशेष कृपादृष्टि करता हूँ। जहाँ मैं यज्ञ-तप-भोक्ता महेश्वर या योगेश्वरके रूपसे स्वयं उपस्थित हूँ, वहाँ श्री, विजय और भूतिकी प्राप्तिमें सन्देह ही क्या हो सकता है?

जहाँ विजयके लिए मेरी उपस्थिति या प्राकट्य आवश्यक है, वहाँ यह भी ज्ञातव्य है कि मैं कब, और कहाँ किस परिस्थितिमें प्रकट होता हूँ। कोई भी देश-काल क्यों न हो, मैं सती-साध्वी स्त्रियों या गृहदेवियों तथा सज्जन पुरुषोंकी रक्षाके लिए प्रकट होता हूँ : **परित्राणाय साधूनाम्**। किसी भी देश या कालमें जब दुष्ट लोग अपनी आसुरी भूख मिटानेके लिए निरीह जनताके धन, मान और प्राण तकको लूट लेनेमें संकोच

नहीं करते, तब उन दुष्टोंका विनाश मेरी दृष्टिमें अत्यन्त आवश्यक हो जाता है; क्योंकि इसके बिना साधु-परित्राणका कार्य सम्भव नहीं हो पाता। अतः दुष्टोंके विनाशके लिए भी मेरा प्राकट्य होता है : विनाशाय च दुष्कृताम्। इस साधु-परित्राण या दुष्ट-विनाशका भी एक महान् उद्देश्य है, धर्मकी संस्थापना। मुख्यतः इसीके लिए मेरा अवतरण होता है : धर्म-संस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।

सारांश, जब दुष्टजन धर्मकी हानि या ग्लानिके लिए उतारू हो जाते हैं; औचित्य और अनौचित्यका विचार ताकपर रखकर हिंसा और अत्याचारके कायरतापूर्ण नग्न-ताण्डव आरम्भ कर देते हैं तथा जब धर्मकी जगह अधर्मका बोलबाला हो जाता है; तब मैं अपने आपको अवश्य प्रकट कर देता हूँ। यह प्राकट्य कभी व्यक्त रूपमें होता है तो कभी अव्यक्त रूपमें। व्यक्तरूपमें अवतीर्ण होनेपर तो सब मुझे देखते ही हैं; परन्तु अव्यक्तरूपमें होनेवाले प्राकट्यको लक्षणोंसे पहचाना जाता है। मेरे प्राकटचका लक्षण है—युद्धमें शत्रु साहस छोड़कर भागने लगते हैं। विजय-लक्ष्मी आगे बढ़कर उस संग्राममें धर्मयोद्धाओंको वरमाला पहनाती है। उन वीर योद्धाओंमें सुप्त शौर्य जाग उठता है; उनमें दक्षता, रणचातुरी प्रकट हो जाती है; उनमें फुर्ती आ जाती है। उनके द्वारा प्रत्येक आवश्यक क्रिया-कलाप तीव्रगतिसे सम्पन्न होने लगता है; वे समयसे पूर्व ही प्रत्येक कार्य पूरा कर लेते हैं। उनमें अन्याय और अनाचारके विरुद्ध अमिट अमर्षका उदय होता है। अदम्य ओज और दुर्द्धर्ष तेज प्रस्फुटित हो जाता है। हृदय अधर्षणीय धैर्यका आगार बन जाता है। वे महान्से महान् क्लेश आनेपर भी उसे धीरतापूर्वक सहन करते हैं, किन्तु साहस नहीं खोते। उनका अखण्डनीय उत्साह उत्तरोत्तर द्विगुणित होता जाता है। वे युद्धमें कभी पीठ नहीं दिखाते, शत्रुके समक्ष कदापि घुटने नहीं टेकते। आगे बढ़ना, यापीछे हटना तो रणकी नीति है; पर उनमें पलायनकी भावना कभी नहीं आती। वे शत्रुओंको कराल कालके गालमें भेजनेको सदा सन्नद्ध एवं जागरूक रहते हैं। वे अदम्य ऐश्वर्यके अधिष्ठान बन जाते हैं।

जो वीर दुखियों, पीड़ितोंको क्षतिसे बचानेके लिए शत्रुओंके साथ सोत्साह जूझते हैं, वे क्षत्रिय कहे जाते हैं। उनके उस शौर्यको 'क्षात्र-तेज'के नामसे स्मरण किया जाता है। जिस देश या राष्ट्रका यह क्षात्र-तेज पूर्णतः समुन्नत है, उसे कोई पराजित नहीं कर सकता। वे युद्धमें होनेवाले उस संहारको लोकक्षयकारी कालरूप परमात्माकी लीला मानकर प्रसन्न होते और मृत्युके साथ खेलते हैं। जित्वा-शत्रून् भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम् (शत्रुको जीतकर समृद्धि शाली राज्यका उपभोग करो)—इस लक्ष्यको लेकर आगे बढ़ते जाते हैं। उन्हें तो यह दृढ़ विश्वास होता है कि जो कुछ होना है, कालदेव द्वारा हो चुका है। हम तो इस युद्धमें विजयके निमित्तमात्र बनते हैं। उनका एक ही नारा होता है : युद्ध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्! —युद्ध करो, निश्चय ही शत्रुओंपर विजय प्राप्त करोगे।

●



स्वागत बाँगला देश !

हरित धरातल अरुण वृत्तमें सुन्दर स्वर्णिम वेश है;
शत-शत अभिनन्दन, शत-शत स्वागत हे बंगला देश है।

(१)

बहुत मनौती करते आये, आज मान्यताएँ ले लो;
अन्तरका आह्लाद, हृदयकी सुखद कामनाएँ ले लो;
मंजिल ले जयमाल खड़ी है, कहीं न शंका शेष है;
शत-शत अभिनन्दन, शत-शत स्वागत हे बंगला देश है।

(२)

धन्य हुई कविकी रचनाएँ भारतकी है भारती;
शब्द-शब्द हैं उतारते तेरे स्वरूपकी आरती;
चूर-चूर हो बिखर गया दानवताका आवेश है;
शत-शत अभिनन्दन, शत-शत स्वागत हे बंगला देश है।

(३)

तेरा नाश उठा धरासे जिसे गगन ने प्यार किया;
सागर इतराया लहरोंमें पौरुषने श्रृंगार किया;
आज विहँसता चन्दा तेरा हँसता नया दिनेश है;
शत-शत अभिनन्दन, शत-शत स्वागत हे बंगला देश है।

(४)

किस मिट्टीसे रचना तेरी कैसा तेरा नीर है;
दर्द कलेजेमें कितना, कितनी प्राणों में पीर है;
गौरव - गाथा लिये हुए तेरा प्रत्येक निमेष है;
शत-शत अभिनन्दन, शत-शत स्वागत हे बंगला देश है।

(५)

तू क्या जागा, जाग गया है, नवयुगका जन-देवता;
तेरा विक्रम सत्य और शिव सुन्दरका दे रहा पता;
चमत्कार-पूरित तेरा पल-पल नूतन परिवेश है;
शत-शत अभिनन्दन, शत-शत स्वागत हे बंगला देश है।

—श्री जगदीश ओझा 'सुन्दर'

मुचकुन्द फिर सो गया, अब कौन कृष्ण उसे जगायेगा ?

श्री देवदत्त शास्त्री

★

[जिस दिन निकट-भूतके भारत-पाकयुद्धका श्रीगणेश हुआ, ठीक उससे ३२ दिन पूर्व क्रान्तदर्शीकी यह सरस्वती प्रवाहित हुई है। इसमें सहृदयकी हृत्तन्त्री चिन्तातुर स्वरमें झनक उठती है। लेकिन अब चिन्ताका कोई कारण नहीं। शान्तिरूपिणी लक्ष्मीके राजमें ऐसे समय श्रीकृष्ण नहीं, योगनिद्रा महाकाली ही मुचकुन्दको प्रबोधित करती है। उसने इसका ज्वलन्त प्रमाण भी प्रस्तुत कर दिखाया है।—सम्पादक]

पांच हजार वर्ष-पूर्व। विघटन, वितृष्णा, ईर्ष्या, कलह, मतभेद और वैयक्तिक स्वार्थोंसे भरा युग—महाभारत-काल! देश छोटे-छोटे राज्योंमें बँटा था। हर राजा अपने आप, अपनेको चक्रवर्ती सम्राट् मानता। अपने राज्यकी सीमा-रक्षा करने और अपनी प्रतिष्ठा बचाये रखनेकी ही चिन्ता हर राजाको रहती। समूचे देशके अभ्युदय, विकास और उसकी सुरक्षाकी चिन्ता किसीको नहीं।

मगध-राज्य उन दिनों धनबल, जनबल, पशुबल, अस्त्रबल, सबमें बढ़ा था। मगध-सम्राट् जरासन्धको उसके उत्पीड़नों, अत्याचारों एवं बर्बरकार्योंके कारण 'राक्षस, दैत्य, अनार्य' आदि कहा जाता। आर्यावर्तकी जनता जरासन्धसे त्रस्त थी ही, देशकी विघटनवादी, व्यक्ति-वादी प्रवृत्तियोंसे लाभ उठाकर विदेशी यवन 'कालयवन' भी जब चाहता, लूट-खसोट करनेके लिए आक्रमण कर बैठता। 'कालयवन' यह आलङ्कारिक नाम है। वह विदेशी बर्बर 'यवन' साक्षात् 'काल' बनकर आर्यावर्तपर जब आक्रमण करता, तो उसके नृशंस हत्याकाण्डोंकी कहानियां सुना-सुनाकर लोग उसे 'कालयवन' कहने लगे थे। वास्तवमें वह था 'तुर्क'।

मध्यदेशका शक्तिशाली राज्य कुरु-राज्य था। कुलीनतासे भी वह भारतके अन्यान्य राजाओंका सम्मानास्पद था। राज्य-सीमा भी अधिक थी। भीष्म, द्रोण, कर्ण, अर्जुन, भीम सदृश अजेय दुर्जय योद्धा कुरु-राज्यके मूर्तिमान् शौर्य थे। कुरु, पाञ्चाल, मत्स्य, चेदि राज्योंके बीच एक छोटा-सा राज्य शूरसेनका था जिसकी राजधानी थी मथुरा। मथुराका शासक कंस था—उग्रसेन यादवका पुत्र और जरासन्धका जामाता। कंस क्रूर शासक था तो अधर्म, अन्याय,

अत्यचार थे उसके शासन-विधानके अंग। जनता उसके अत्याचारोंसे ऊबकर, भयत्रस्त हो मथुरा छोड़ व्रजके अन्यान्य स्थानोंमें जा बसी थी। अपने पिताको पदच्युत कर राज्यसत्ता हस्तगत करनेके बाद कंसने अपनी विवाहिता बहन देवकी और उसके पति वसुदेवको कारागारमें डाल दिया। वहीं कारागारमें देवकीके आठवें गर्भसे श्रीकृष्ण पैदा हुए। सात नवजात सन्तानोंकी भाँति इस आठवीं सन्तानका भी वध कंस न कर डाले, इस भयसे वसुदेव नवजात शिशुको रातों-रात छिपकर अपने मित्र नन्दके यहाँ गोकुल ले गये।

श्रीकृष्णका जन्म और कर्म सभी अलौकिक, अद्भुत और दिव्य था। इसी दिव्यताने उन्हें 'पूर्णावतार' माननेके लिए जन-मानसको आश्वस्त और विश्वस्त किया। श्रीकृष्ण परात्पर परब्रह्म माने जाने लगे। बचपनसे लेकर परधाम-गमनतक उनके सभी कर्म, सभी आचरण मानवेतर थे, ईश्वरीय थे, दिव्य थे। मनुष्यरूपमें अवतरित भगवान् श्रीकृष्णने मनुष्य बनकर ही राष्ट्र, धर्म, समाज और संस्कृतिके उद्धारके जो भी कार्य किये, वे मानवी शक्तिसे परे, दिव्यशक्ति-सम्पन्न थे।

भगवान् श्रीकृष्णने बचपनमें लोकानुग्रहकी कांक्षा रखकर जो भी क्रीडाएँ-लीलाएँ कीं, उनके मूलमें जन-मानसको जाग्रत् बनाने, परस्पर एकता, विश्वास पैदा करने और संगठनका भाव निहित था। जन-संगठन, सामाजिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रिय एकता तानाशाह—निरंकुश शासकके लिए खतरनाक होती है। वह साम्राज्यका सिंहासन उलट देती है। इस खतरेका आभास कंसको हो गया। वह कृष्णको मार डालनेके अनेक प्रकट-अप्रकट उपाय करने लगा। व्रजकी जनताको पीड़ित करने लगा। उत्पीड़न बढ़ता गया, साथ ही जन-संगठन और जन-जागरण भी। परिणाम यह हुआ कि जनबलके समक्ष सैन्यबल, पशुबल, धनबल धराशायी हो गया। बालक कृष्णने भरी सभामें कंसको पटककर मार डाला।

कंसके पिता उग्रसेनको राज्याध्यक्ष बनाकर श्रीकृष्णने 'गणतांत्रिक शासन' कायम किया। अन्धक और भोजकी दो सभाओंके सदस्योंके सहयोगसे मथुरामें गणतन्त्र-शासन चलने लगा। विश्वका यही सर्वप्रथम 'गणराज्य' था। प्रजा खुशहाल थी। धर्म, कर्म, राजनीति सबमें सत्य और धर्मको प्राथमिकता दी गयी। शूरसेनका राज्य छोटा होते हुए भी पड़ोसी राज्योंकी अपेक्षा सशक्त और श्रीसम्पन्न बन गया। मगध-सम्राट्को यह सह्य नहीं हुआ। उसके लुटेरे बर्बर मित्र विदेशी कालयवनको भी यह बुरा लगा। जरासन्ध और कालयवनके आक्रमण लगातार मथुरापर होने लगे। एक नहीं, सत्रहबार मथुरामें खूनकी नदियाँ बहायी गयीं। धन, जन सबका विनाश किया गया। पूर्वसे जरासन्ध और पश्चिमसे कालयवनकी सैन्यवाहिनी जब मथुरामें आक्रमण करनेके लिए प्रस्थान करती तो बीचके सभी राज्य उन्हें अपने राज्यसे सेना ले जानेका मार्ग देते ही, अधिकांश उनके साथ ससैन्य आक्रान्ता भी बनकर सम्मिलित हो जाते। किसी भी राजाके हृदयमें कभी भी यह विचार न आया कि इस प्रकारके आक्रमणों और हमारी उपेक्षा अथवा सहायतासे देशकी क्या स्थिति होगी?

श्रीकृष्ण अपनी युद्धनीति, कूटनीतिके सहारे तथा जनबलके भरोसे हर आक्रमणका मुँहतोड़ जवाब देते रहे। किन्तु सत्रहबारके आक्रमणोंमें जनबल, धनबल, कृषिबल, पशुबल

सब तहस-नहस हो चुका था। शत्रुओंसे जूझनेकी क्षमता शासन और जनतामें जब न रह गयी तो कृष्ण चिन्तित हो उठे, क्योंकि गुप्तचरोंने सूचना दी कि कालयवन विशाल सेनासहित चला आ रहा है। अठारहवीं बारके इस आक्रमणको न झेल सकनेके कारण श्रीकृष्णने उत्तम राजनीतिक निर्णय यह किया कि यादवी सेना, यादवकुल, शूरसेनकी प्रजा सबको मथुरासे दूर ऐसे स्थानपर स्थित किया जाय जो भौगोलिक दृष्टिसे समरके लिए उचित हो; जहाँसे राज्य-विस्तारकी पूरी संभावनाएँ हों और जनताका सामाजिक, आर्थिक विकास सहज ही होता रहे। इस दृष्टिसे पश्चिम सागर-तटपर स्थित द्वारावतीको उन्होंने सर्वथा उपयुक्त समझकर उसे ही राजधानी बनाया और समस्त यादवकुल, यादवसेनाको वहीं भेजकर श्रीकृष्ण सूनी मथुरामें अकेले रहकर कालयवनकी प्रतीक्षा करने लगे।

श्रीकृष्ण एकाकी संघर्षरत थे—धर्मकी स्थापनाके लिए अधर्मके विनाशके लिए, भारतीय प्रजाकी सुख-समृद्धिके लिए और भारतको भारत, आर्यावर्तको आर्यावर्त बनाये रखनेके लिए। राष्ट्र और समाज उत्तरोत्तर चरित्रहीन होता जा रहा था। आचार कदाचारमें परिणत हो रहा था। गृहदाह, फूटके स्फुलिंग चारों ओर व्याप्त थे। ऐसे दुर्धर्ष कालमें श्रीकृष्ण ही अकेले ऐसे व्यक्ति थे जो राष्ट्रिय एकता, राष्ट्रिय अभ्युदयके लिए जन्मसे लेकर अन्ततक जूझते रहे। उन्होंने अपने जीवनकालमें ऐसे अद्भुत, अकल्पनीय कर्म किये कि उनका दिव्य, तेजोमय, लोकानुग्रहकांक्षी व्यक्तित्व और कृतित्व परात्पर ब्रह्मके पूर्णावतारके रूपमें अर्चित और चर्चित हुआ। राजनीतिमें वे अखिल भारतवर्षके एकमेव लोकनायक सिद्ध हुए।

देशद्रोहियों, जनद्रोहियों, धर्मद्रोहियोंके आक्रमणों, आघातका लक्ष्य उस समय लघु गणतंत्र मथुरा-राज्य इसलिए रहा कि उसके नायक श्रीकृष्ण राष्ट्र, धर्म, समाजके रक्षण-पोषणके लिए कृतसंकल्प होकर क्रियाशील थे। वे धर्माभ्युदय, लोकाभ्युदयकी आकांक्षा रखते। निजी स्वार्थ और राज्यलिप्सा उनमें लेशमात्र नहीं थी। उनके पड़ोसी राज्य तथा देशके अन्यान्य राज्य ठीक इसके विपरीत निजी स्वार्थोंके संघर्षमें निमग्न थे। उनके लिए देश, धर्म, समाजकी कोई चिन्ता नहीं थी।

अठारहवीं बार कालयवन तूफान बनकर, प्रभंजन बनकर जब मथुराकी ओर आ रहा था, उस समय सिन्धु, सौवीर, कुरु किसी राज्यने उसका मार्ग नहीं रोका; वह अप्रतिहत गतिसे आ रहा था। कुरु-राज्यकी भूमिसे कालयवनकी विशाल वाहिनी शूरसेनकी सीमामें आ पहुँची; किन्तु कुरुराज्यके अजेय योद्धा भीष्म, कर्ण, दुर्योधन, कृप, द्रोण उस समय एकवस्त्रा अबला द्रौपदीकी साड़ी खींचकर उसे नङ्गी करनेकी सभा जुटाये थे। द्रौपदीके पाँच दुर्जय योद्धा पति मुँह नीचे किये हाथपर हाथ धरे बैठे थे।

कालयवन आ गया। मथुराकी सीमामें सैन्यदल ठहर गया। कई दिन हो गये, मथुराकी ओरसे कोई चहल-पहल नहीं दिखायी पड़ी। गुप्तचर नगर भेजा गया, तो पता चला कि मथुरा नगरी सुनसान, वीरान पड़ी है। मनुष्यकी कौन कहे, पशु-पक्षीतक वहाँ नहीं। सारी खेती विनष्ट कर दी गयी। वनस्पतियाँतक विध्वस्त कर दी गयीं।

यह सुनकर कालयवन आशंकित और आश्चर्यचकित हो गया। उसे विश्वास नहीं हो रहा था। वह जानता था कि इसमें कोई छल है, चाल है। वह स्वयं पता लगाने नगरकी ओर रातके अन्धेरेमें छिपकर, किन्तु सजग होकर सशस्त्र गया। नगरके मध्यमार्गपर उसे एक व्यक्ति मिला।

'तुम कौन हो ?'—कालयवनने कड़ककर पूछा।

'भूल गये कालयवन ?'—मुस्कराते हुए उस व्यक्तिने उत्तर दिया। उत्तर सुनते ही म्यानसे तलवार खींचकर कालयवन बोला :

'अरे धूर्त कृष्ण, तू है ! इस बार तुझे जीता न छोड़ूँगा।'—कहते हुए कालयवन श्रीकृष्णको मारनेके लिए झपटा तो वह भाग चले। कालयवनने भागते श्रीकृष्णका पीछा किया।

कालयवनके आक्रमणका समाचार सुनकर श्रीकृष्णने देश, काल और परिस्थितिपर विचार करनेके बाद यादवोंको यही परामर्श दिया : 'बार-बारके आक्रमणों और लगातार चलनेवाले युद्धोंसे कोषबल, सैन्यबल और जनबल क्षीण होता जा रहा है। कोई और सहायक मित्र राजा नहीं है। सभी अपनी-अपनी चिन्ता कर रहे हैं। समग्र राष्ट्रकी रक्षाकी चिन्ता किसीको नहीं है। ऐसी हालतमें शत्रुसे कूटयुद्ध करना ही उचित होगा। जन-विनाश, पशु-विनाश और कोष-विनाश बचानेके लिए मथुरा खाली करके द्वारावतीमें बस जानेसे सुरक्षा रहेगी और एक सार्वभौम राष्ट्रकी हमारी कल्पना साकार बनेगी। साम्राज्यवादकी जगह प्रजातन्त्रवादकी स्थापना, गणतन्त्र-शासनकी स्थापनाका लक्ष्य अब सम्मुख-युद्धसे नहीं, कूट-युद्धसे ही सम्भव है। यदि हम सशक्त बने रहेंगे तो अन्य राज्य हमारे सहयोगकी आकांक्षा रखेंगे। हम जिसका पक्ष लेंगे, वह विजयी बनेगा। हमारी यादवी-सेना शक्ति-सम्पन्न है, तो इसका यह अर्थ नहीं कि वह पहाड़से टकराकर अपनेको विनष्ट कर दे। यादवी-सेनाकी शक्ति यदि बनी रही तो गृहयुद्ध, गृह-कलह, गृहदाहमें निमग्न कुरुराज्यकी रक्षा की जा सकेगी। इस समय कुरुराज्य ही ऐसा राज्य है, जो कुलीनतामें, शस्त्रबलमें, कोषबलमें और सीमा-विस्तारमें भारतका प्रमुख राज्य है। वह विघटित, विनष्ट हो गया तो भारत सदाके लिए पराधीन, प्रताड़ित बनकर अस्तित्व खो बैठेगा। यदि हम कूटयुद्ध द्वारा कालयवनको सदाके लिए समाप्त कर देते हैं और द्वारावतीमें अपने कर्म-कौशल, युद्ध-कौशल एवं धर्म-नीतिके अवलोकनसे शक्ति संचित कर श्री, कीर्ति, विभूति प्राप्त कर लेते हैं तो निश्चय ही कुरुराज्य हमारी अपेक्षा करेगा, उसके सहयोगसे हम मगधराज जरासंधको भी समाप्त कर सकेंगे। कुरुराज्य सार्वभौम सत्ता स्थापित करनेमें सक्षम है, हमारा सहयोग उसे सदाके लिए कृतज्ञ बना देगा।'

युद्ध-समितिने श्रीकृष्णकी यह बात तो मान ली, किन्तु वह यह माननेके लिए तैयार नहीं थी कि सेनाविहीन श्रीकृष्ण अकेले मथुरामें रह जायें। बलरामने इसका प्रबल विरोध करते हुए कहा : 'यदि सेना नहीं रखना चाहते, तो मैं तुम्हारे साथ रहूँगा। अकेला नहीं रहने दूँगा।' अनेक तर्कों और प्रमाणों द्वारा श्रीकृष्ण बलरामजीको समझा रहे थे, किन्तु मनकी बात वह किसीसे नहीं बताना चाहते थे। उन्होंने कालयवनको, कूटयुद्ध कर समाप्त

करनेकी एक गुप्त योजना मन ही मन सोच रखी थी। उन्हें स्मरण था कि इक्ष्वाकुवंशीय राजर्षि मुचकुन्द अनन्त-निद्राका वर प्राप्त कर सो रहा है। उसे जो जगायेगा, वह भस्म हो जायगा।

सतयुगके राजर्षि मुचकुन्दका एकमात्र ध्येय जनकल्याण करना था। वह निरन्तर जनकल्याणमें निरत रहते हुए बहुत श्लथ, श्रान्त हो गये तो तपस्यामें निरत हो गये। उनकी तपस्यासे प्रसन्न हो ब्रह्माजी प्रकट हुए और बोले। 'वरं ब्रूहि?'

समाधिस्थ मुचकुन्द हिले-डुले नहीं, तो ब्रह्माजीने पुनः कहा : 'राजर्षि, मैं तुम्हारी तपस्यासे प्रसन्न हूँ, माँग लो वर जो चाहो?'

मुचकुन्दकी समाधि भंग हुई। सामने खड़े ब्रह्माजीको प्रणिपात करते हुए वह बोला : 'प्रभो, बहुत थका हुआ हूँ। समाधि-अवस्थामें बड़ा सुख मिल रहा था। मैं इस सुखसे वंचित नहीं होना चाहता। मुझपर आप प्रसन्न हैं तो देव, यही वरदान दें कि मैं सोता रहूँ; और कोई मुझे जगाये तो वह भस्म हो जाय।'

'तथास्तु'—कहकर ब्रह्माजी अन्तर्धान हो गये और राजर्षि मुचकुन्द जहाँ तपस्या कर रहे थे, उसी गुफामें निद्रामग्न सोते रहे।

मुचकुन्दके वरदान और निद्रामग्न होनेकी बात यादकर ही श्रीकृष्णने कालयवनको बेधड़क आने दिया और मथुरा खाली करवा दी।

भगवान् कृष्ण भागते रहे। कालयवन तलवार सूते उनके पीछे-पीछे दौड़ रहा था। वन-पर्वत, नदी-नाले लाँघते-फाँदते दोनों बेतहाशा भाग रहे थे। दोनोंके लक्ष्य अडिग थे; किन्तु एक बुद्धिकौशलसे काम ले रहा था तो दूसरा क्रोधसे। क्रोधसे पागल कालयवनको यह भी ज्ञान न रहा कि वह कितने दिनोंसे पीछा कर रहा है और अपनी छावनीसे कितनी दूर निकल आया है।

दौड़ते-दौड़ते दूर पहाड़ीपर एक गुफा मिली। गुफा देखते ही श्रीकृष्ण पीताम्बरका छोर लहराकर उसमें घुस गये। पीतपटकी फहरानका अनुसरण कर कालयवन भी वहाँ पहुँच गया। गुफाके भीतर ब्रह्मासे वर-प्राप्त राजर्षि मुचकुन्द सो रहे थे। सोते हुए राजर्षिको क्षणभर निहारकर श्रीकृष्णने अपना पीताम्बर उन्हें ओढ़ा दिया और भागकर गुफाके एक अन्धेरे कोनेमें छिप गये। दूसरे ही क्षण क्रोधाभिभूत कालयवन गुफामें घुसकर देखता है कि पीला दुपट्टा ओढ़े कोई लेटा है। उसने समझा, यह श्रीकृष्ण ही है।

कड़कते हुए स्वरसे वह बोला : 'अरे धूर्त! उठ, तेरा काल आ गया है!' और झपटकर दुपट्टा हटाकर झकझोर दिया। कालयवनके झकझोरनेसे मुचकुन्दकी युगोंकी नींद टूट गयी। आँखें मलते-मलते वह उठ बैठा। कालयवनको यह सोचनेका भी मौका न मिला कि यह कौन है, इतनेमें अंगारेसे जलते हुए नेत्र खोलकर मुचकुन्दने कालयवनको देखा और वह क्षणभरमें भस्म हो गया!

सोया हुआ मुचकुन्द कौन था? यदि हम उसे भारतकी जनशक्ति कहें, तो असंगत नहीं। युगोंसे आलसी बनी भारतीय जनता प्रसुप्त थी। विदेशियोंद्वारा राष्ट्र रौंदा जा रहा था। देशी राजा, महाराजा अपनी-अपनी डफली, अपना-अपना राग अलाप रहे थे। एकता,

हार-जीत मत विचार, है प्रहार धर्म !

यमुनाके तटपर फिर नटवर नंदलाल,
खेलें भी खेल साथ ले गोपी-ग्वाल,
एकबार यमुनामें गेंद जाय खो,
विषधरके फन-फनपर फिर नर्तन हो।
गोकुल-सी सरस भूमि शोक-भय तजे।
एकबार फिरसे वह बाँसुरी बजे॥

मानवताका यदि हो फिरसे विध्वंस,
कृष्णको चुनौती यदि भेजे फिर कंस,
राधा उरमें फिरसे भाव जगे आज,
जन-हितके लिए गये मेरे सरताज,
राधिका न बाधा है—इतना निश्चय।
एकबार हो फिरसे प्रेमकी विजय॥

कौरव-कुल समझ जाय अब तो यह मर्म,
विजय-केतु फहराता है सदैव धर्म,
संख्याकी नहीं, हुई सत्यकी विजय,
शंख-ध्वनि हो, फिरसे पापका विलय,
भृकुटि तने, सरल हृदयमें हो फिर रोष।
एकबार हो फिरसे पाञ्चजन्य-घोष॥

पार्थ अगर विचलित हो वह दे उपदेश,
कैसा है मोह-शोक, कैसा यह क्लेश,
फलकी आसक्ति त्याग करना है कर्म,
हार-जीत मत विचार, है प्रहार धर्म।
टूटे प्रण फिर से, रथ-चक्र फिर चले।
एकबार फिरसे वह सारथी मिले॥

—श्री राधेश्याम 'प्रगल्भ'

संगठनशक्तिका अभाव हो गया था। जनता परमुखापेक्षी, आलसी और निष्क्रिय बन चुकी थी। उसे जगाया श्रीकृष्णने। जन-जागरण ही मुचकुन्दका जागरण है। शताब्दियोंसे सोये मुचकुन्द (जनबल) को अपना पीताम्बर ओढ़ाकर, उससे तादात्म्य साधकर उसे जागृत किया था। उसके जागते ही कालयवन—विदेशी आक्रमण चूर-चूर हो गया।

शताब्दियों बाद मुचमुन्द फिर सो गया। अभी सो रहा है। पूर्वसे जरासंध, पश्चिमसे कालायवन हुंकार रहे हैं। भारतपर आक्रमणकी तैयारी कर रहे हैं और मुचकुन्द सो रहा है। अब कौन कृष्ण उसे जगायेगा ?

इतिहासके तेवर

डा० भगवान सहाय पचोरी



[पृष्ठभूमिमें दूरागत जन-कोलाहलके क्षीण स्वर उभरकर धीरे-धीरे समीप आते जाते, मन्द-गम्भीर होते जाते और सारे वातावरणको छा लेते हैं। चीखें, चिल्लाहट, रुदन, भगदड़की आँधी—एक तूफान-सा छा जाता है। बीच-बीचमें यौद्धिक तूर्योंका उद्घोष वातावरणको और भी भयानक बना रहा है। इस भयानकताको रौंदती, सहसा एक साथ कई दैत्योंके भीषण अट्टहासोंकी मिली-जुली ध्वनि गूँज उठती है। अट्टहास गूँजता रहता है। इसी बीच एक अत्यन्त गम्भीर और बादलों जैसा मन्द्र पुरुष-कण्ठ ऊँची हुँकारके साथ खुलता है। यह इतिहास पुरुष है]

इतिहास-पुरुष (पुरुष-कण्ठ) : यह सब क्या है ? यह कौन-सा तूफान आ रहा है ? कैसी आँधी आ रही है यह ? कानोंके परदे फटे जा रहे हैं। चीखें और चीखें, आर्तनाद और आर्तनाद !

भारतमाता (नारी-कण्ठ) : सूरज, चांद और नक्षत्रोंसे पूछो इतिहास-पुरुष ? पूछो धरतीके इस ग्लोबसे। चीखों चिंघाड़ोंसे पूछो और उस हलाकूसे, उस चंगेजसे कि यह सब क्या है, क्या है सब ? यह धरती, ये महासागर, यह नीला आकाश, ये रात, ये दिन, युग और मन्वन्तर गवाही देंगे कि क्या इतना बड़ा नरमेध कभी पहले भी हुआ है ? असहाय और निहत्थी मानवतापर इससे पहले क्या कभी इतना जबर्दस्त गजब ढाया गया है ?

इ० पु० : हलाकू और चंगेज कभीके सो चुके गहरी नींदमें। उन्हें कौन जगाने जायगा भारत माँ ! न कुरेदना ही अच्छा है उन्हें। आह, हलाकू और चंगेज। (अट्टहास) अटल्ला और नादिरशाह, तैमूर और दुर्रानी ! नाम मत लो उनका माँ, नाम मत लो। आह !

भा० माँ : आँखें खोलो इतिहास-पुरुष, आँखें खोलो। आँखें मीचनेसे यथार्थका कुछ नहीं बिगड़ेगा। देखो, वह देखो—सामने मौत उगलनेवाले गोले निकलकर निरीह मानवताको

कालके गालमें पहुँचा रहे हैं। मौतकी चर्खियाँ तेज चल रही हैं। भीमकाय टैंकोंसे धरती रौंदी जा रही है। बांगला-देशमें युद्धोन्मत्त दानव बे-रोक-टोक ताण्डव नृत्य कर रहा है। भूख नहीं बुझ पा रही है दरिन्दोंकी। नापाक मानवभक्षी दुश्मन दनादन जनताको भूने डाल रहा है, आह!

इ० पु० : मैं यह सब कुछ नहीं जानना चाहता भारत-माँ। जानना चाहता हूँ, ये लाखोंको तादादमें भीड़ मेरे देशकी धरतीपर क्यों चढ़ी आती है? क्यों आ रहे हैं ये दलके दल? मेरे शुभ्र-श्वेत पन्नोंपर रक्तके धब्बे क्योंकर लगे हैं? कौन उत्तरदायी है मेरे इस रूपको बिगाड़नेका? गौतम और गान्धीकी इस दिव्यभूमिमें यह कैसी खलबली मची हुई है? पतितपावनी गंगा, यमुना, कृष्णा, कावेरी, नर्मदा, ताप्ती और ब्रह्मपुत्रके शीतल पानी कैसे खौल उठे हैं माँ? बोलो, बताओ यह शुभ्र उत्तुङ्ग हिमालय कैसे चीख रहा है? मेरे देशके मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारे और गिरजोंमें होनेवाली प्रार्थनाओंके गले क्यों थर्रा उठे हैं एकाएक? द्वारिकाधीश, जगन्नाथ और देवाधिदेव सोमनाथके घण्टोंके स्वर कैसे विकृत हो गये हैं भारत-माँ? बोलो, मेरी प्यारी माँ! ये कैसी आग उठी है, जिसने कश्मीरसे कन्याकुमारीतक और कच्छसे कामरूपतक सन्नाटेकी काली चादर तान दी है?

भा० माँ० : पुरातन पुरुष! दिग्भ्रान्त न हो, सैलाबको रोक नहीं पाओगे। तूफान बँध नहीं पा रहा है। यह आँधी रुक नहीं पा रही है। मैं भविष्यके सुख-स्वप्नोंको साकार करनेमें आत्म-विभोर थी। भाखड़ा, नांगल, सिन्दरी, भिलाई, विशाखापट्टनम् जैसे नव-निर्माणों-की शृंखलाओंका पूरा करनेमें व्यस्त थी। मानव-मानवकी रोटी, कपड़ा और मकान जुटाकर गरीबी हटानेको कृत-संकल्प, नाना उपायों और प्रयासोंकी खोजमें तन्मय थी। तभी प्रायः एक करोड़ बे-सहारा बे-घर-बार त्राहि-त्राहि चिल्लाते बालक, बूढ़े, जवान, स्त्री और पुरुषोंके भरण-पोषकका दुर्वह भार मेरे कन्धोंपर और डाल दिया हमारे पड़ोसीने। कमर टूटी जाती है, सिर फटा जा रहा है दुश्चिन्ताओंके क्रूर आघातोंसे।

इ० पु० : किन्तु तुम अबला तो नहीं हो माँ! करोड़ों भुजाओंवाली हिमालयके मुकुट और महासागरोंसे पाद-प्रक्षालन करानेवाली, सूरज और चाँद-सितारोंसे आरती उतरवानेवाली, गौतम, गान्धी, जवाहर, पटेल, लालबहादुर जैसे सपूतोंकी जननी भारत-माता! क्या, चाणक्यों और चन्द्रगुप्तोंकी परम्परा टूट गयी भारतजननी? क्या अलक्षेन्द्रके दाँत खट्टे करनेवाला पौरुष जंग खा गया? क्या हो गया तेरे देशको?

भा० माँ० : विश्व जानता है, दिशाएँ जानती हैं भारतीय शौर्यको और तुम स्वयं साक्षी हो, इतिहास पुरातन कि हमारे घोड़ोंने कभी अरल झीलमें जाकर पानी पिया है। सुदूर पूर्व मलयेशिया और पश्चिममें मिस्रतक भारतके जय-गीत गूँजे हैं। अभी कलकी बात है कि हमारे टैंक और हमारे नेट-सैबरजेटोंने स्यालकोट और लाहौरमें जाकर तेल लिया था। क्या तुम्हें याद दिलानेकी आवश्यकता है इतिहास-पुरुष?

इ० पु० : तब ?

भा० माँ० : तब और अबमें भारी अन्तर है। ये करोड़ों शरणागत थे, वे आक्रान्ता। इनको गोली नहीं, रोटी और शरण चाहिए थी। मेरी सन्तान महाकरुणाका पाठ पढ़ी है। मेरा बेटा गौतम देशकी आत्मामें है, गान्धीकी आत्मामें है। मानवतावादकी जो भी कीमत चुकानी पड़ी, चुका चुका है मेरा जवाहर। चुका रही है बेटी इन्दिरा। मुझे सन्तोष है कि मेरे हमीरोंने शरणागत-वत्सलता खूब निभायी है।

इ० पु० : फिर क्या ?

भा० माँ० : फिर क्या ? 'सत्यमेव जयते नानृतम्!' न्याय मेरे साथ है, जय मेरी होगी।

इ० पु० : क्षमा करना भारतजननी! न्यायको तो मैंने युगान्तरोंसे इधर विश्वमें विचरण करते हो नहीं देखा। सुना था, वह अज्ञातवास कर रहा है निर्वासित होकर, और उसके सिंहासनपर बैठा है उसीका सहोदर अन्याय। आज शक्तिमें न्यायका निवास है। जिसके मुक्केमें जो है, उसीकी जय है।

भा० माँ० : यह ठीक है कि शक्तिमें विजय है, किन्तु उत्पीड़न ही शक्तिका प्रतीक नहीं हैं। न्याय-संगत, सत्यसंगत कदम ही भारत उठाता रहा है। सत्यसे वह नहीं हटेगा, चाहे जो हो।

इ० पु० : तभी न १९४७ में तुम्हारे दो टुकड़े कर दिये थे गौरांगों और उनके पिट्ठूओंने! जब साम्प्रदायिकताकी आंधी आयी थी। नोआखाली और रावलपिण्डीके भीषण संहारोंसे मेरा कलेजा दहल उठा था। और हाँ, कश्मीरकी केसर-क्यारियोंको जब कबाइली दरिन्दोंने बेदर्दीसे रौंदा था!

भा० माँ० : भारतकी आरम्भसे ही शान्ति और सद्भावनाकी नीति रही है। भौगोलिक, सांस्कृतिक, भाषाई और ऐतिहासिक सूत्रोंकी एकता तथा अन्यान्य बन्धनोंके कारण भारतका दृढ़मत रहा है कि दोनों देशोंके मध्य मैत्री और सद्भाव आवश्यक है। भारतीय नेतृत्वने सदैव यही सोचा है और यही किया है।

इ० पु० : ठीक है। मुझे स्मरण है, स्वतन्त्रता-प्राप्तिके ठीक सात हफ्ते बाद ही भारतकी प्रभुसत्ता और उसकी अखण्डतापर जब पाक-सहायताप्राप्त कबाइलियोंने आक्रमण किया था, तो भारतने एक विरोधपत्र पाक-सरकारको भेजा कि वह आक्रान्ताओंकी सहायता न करे। इसपर पाक-शासक इस आरोपको नकार गये। भारत युद्ध कर सकता था, किन्तु उसने शान्तिका मार्ग अपनाया और राष्ट्रसंघमें उस पाक-आक्रमणके विरुद्ध शिकायत की, जिसपर राष्ट्रसंघका एक कमीशन कश्मीर आया था। यह घटना जुलाई १९४८ की थी। पाक-विदेशमन्त्री जफरुल्ला खाँने सुरक्षा-परिषद्को बड़ी बेशर्मीसे बताया था कि कश्मीरमें पाकके तीन ब्रिगेड मई '४८ में भेजे गये थे।

भा० माँ० : सन् १९५६ में पुनः पाकने कच्छके-रनके उत्तरीय भाग छाड़बेटको हड़पनेकी चेष्टा की। भारतीय फौजोंके वहाँ पहुँचनेपर वह अपनी सीमामें सेनाएँ वापस लौटा ले गया।

इ० पु० : सन् १९६४ में पाकिस्तानने भारतीय सीमाओंका पुनः अतिक्रमण करके कंजरकोट-पर अधिकार कर लिया। शान्ति और मैत्रीकी नीतिपर स्थिर रहकर भारतने पाकको

पुनः सुझाव दिया कि भारत-पाक-सीमान्त-सन्धि १९६० के अनुसार दोनों देशोंके स्थानीय सेनाध्यक्ष मिलकर पूर्व-स्थितिको कायम करें। पाकिस्तानने इन सबकी उपेक्षा करते हुए कच्छमें हमारी सदर चौकीके सामने बाकायदा भारी तोप-खाना और एक ब्रिगेड सेना एकत्र कर दी।

भा० माँ० : भारतीय प्रधानमन्त्री लालबहादुर शास्त्रीने अप्रैल, १९६५ में लोकसभाको सम्बुद्ध करते हुए कहा कि 'पाकका यह आक्रमण पूर्व-नियोजित और पूर्व-संकल्पित था, क्योंकि पकड़े गये पाकिस्तानियोंसे प्राप्त अभिलेखोंसे यह सिद्ध होता था कि आक्रमणके आदेश ७ अप्रैलको दिये गये थे, जब कि भारतपर आक्रमण अगस्त १९६५ को किया गया।

इ० पु० : और पाक-विदेशमन्त्री जुल्फिकार अली भुट्टोने एक कमजोर तर्क दिया था कि 'यह सीमा-विवाद है, क्योंकि विवादग्रस्त भूमि भारतके अनधिकृत अधिकारमें है।'

भा० माँ० : दूसरे शब्दोंमें राष्ट्रसंघ-चार्टर तथा भारत-पाक-सीमा-सन्धि '६० के अनुसार जो भूमि पाकिस्तानके अधिकारमें नहीं थी, उसपर उसने बाकायदा सशस्त्र आक्रमण किया था।

इ० पु० : भारत इसपर भी नहीं भड़का और उसने युद्धबन्दीका प्रस्ताव पाकके सामने रखा। पारस्परिक बातचीतके माध्यमसे पूर्व-स्थिति स्थिर रखने और उच्चस्तरीय मीटिंगके माध्यमसे सीमा-विवादपर विचार-विमर्श करनेका प्रस्ताव रखा।

भा० माँ० : किन्तु जैसा कि पाकिस्तानका रवैया सदैव ही रहा है, कूटनयके माध्यमसे इस विवादपर विमर्श जारी ही था कि उसने छाड़बेटके पश्चिम ८४ पाइंटपर भारी तोपखाने और असंख्य सैनिकोंसे आक्रमण कर दिया। तब भारतीय सेनाको हस्तक्षेप कर आक्रान्ताओंको पीछे खदेड़ना पड़ा।

इ० पु० : पाकने इसपर बड़ा शोर-शराबा मचाया और गम्भीर युद्धका-सा एक वातावरण बना दिया। लन्दनमें राष्ट्रकुल-देशीय प्रधान-मन्त्रियोंके सम्मेलनमें तत्कालीन ब्रिटिश प्रधानमन्त्री सर हेराल्ड विल्सनके प्रयासोंसे भारतने युद्ध-विरामपर हस्ताक्षर किये।

भा० माँ० : यह ३० जून, १९६५ की घटना है।

इ० पु० : इस सन्धिके अन्तर्गत एक तीन सदस्यीय न्यायाधिकरणकी स्थापना की गयी, जिसका सभापति स्वीडेन था। इस विश्व-न्यायाधिकरणने भारतके पक्षमें निर्णय दिया और इस-बार पाकिस्तानके युद्धके इरादे पुनः प्रमाणित हो गये।

भा० माँ० : किन्तु पाकिस्तानी आक्रमणके इरादोंकी कथा यहीं समाप्त नहीं हुई। कच्छ-सन्धिकी स्याही अभी सूख भी नहीं पायी थी और उसके अनुसार भारत-पाक विदेश-मन्त्रियोंके सम्मेलनका दौर चल ही रहा था कि ५ अगस्त, १९६५ को पाकिस्तानने भारत-भूमिपर पूरी तैयारी और पूर्वयोजनानुसार तृतीय आक्रमण कर दिया। ४७० मील लम्बी युद्ध-विरामरेखाको पार करके जम्मू और कश्मीरमें हजारों पाक-सैनिक नागरिक वेशमें प्रवेश कर गये। लूट-खसोट, हत्या और तोड़-फोड़का दौर आरम्भ हुआ।

इ० पु० : सन् १९४७ की ही भाँति पाकने पुनः आक्रमणको साफ नकार दिया। भारतीय सेनाओंने कड़ाईके साथ घुसपैठियोंको कुचला, तो १ सितम्बर, १९६५ को पाकिस्तानके

सत्तर पैटन-टैंकों और फौजके पूरे एक ब्रिगेडने अन्ताराष्ट्रिय सीमाओंको पार करके भारत-पर आक्रमण कर दिया। यह अन्तारा‌ष्ट्रिय कानून और युद्ध-विरामसन्धिके नितान्त प्रतिकूल था। प्रेसीडेण्ट अयूब खांने पाक-रेडियोसे घोषणा की कि भारत आजाद कश्मीर या पाकिस्तानपर उनको मदद करनेका आरोप कैसे लगा सकता है ?

भा० माँ० : और पाक-सेनाध्यक्ष जनरल मूसाने प्रलाप किया कि 'तुम्हारे दाँत शत्रुमें गड़े हैं। गहरेसे गहरा काटो और शत्रुको नष्ट कर दो।'

इ० पु० : किन्तु पाकिस्तानी दाँत भारतमें गहरे न पैठ सके और न काट सके। ६ सितम्बर '६५ को भारतीय बहादुर सेनाओंने तीन ओरसे पाक-सीमाओंका लाहौर-क्षेत्रमें अतिक्रमण किया और पाकिस्तानी फौजोंके स्रोतको धर दबाया।

भा० माँ० : फिर भी भारतने स्पष्ट कर दिया था कि हमारी कार्यवाही वहींतक सीमित है, जहाँतक पाकिस्तान यह अनुभव करने लगे कि कश्मीर भारतका एक अविभाज्य अंग है और कोई भी विदेशी भारतकी अखण्डतापर प्रहार नहीं कर सकता।

इ० पु० : भारतके प्रधानमन्त्री लालबहादुर शास्त्रीने इस अवसरपर कहा था कि 'पाक जनतासे हमारा कोई झगड़ा नहीं। हम उनका शुभ-चिन्तन करते हैं। हम उन्हें फलते-फूलते देखना चाहते हैं और उनके साथ मन्त्री और शान्तिपूर्वक जीना चाहते हैं।'

भा० माँ० : युद्ध-विराम होनेतक भारतीय सुरक्षा-सेनाएँ पूरे विस्तृत युद्ध-क्षेत्रमें कश्मीरसे सिन्धतक कार्यवाहीके लिए कृतसंकल्प खड़ी रहीं। जहाँ भारत पाक जनताका शुभचिन्तक था, युद्ध-विरामके प्रायः चार घण्टे बाद ही पाक-सेनाओंने अमृतसरके समीप भारी बम-वर्षा करके क्रूरता और नृशंसतापूर्वक भारतीय नागरिकोंको भूना।

इ० पु० : इस पाक-आक्रमणने विश्व-जनमतकी आँखें खोल दीं कि पाकिस्तानने कच्छके रनके आक्रमण द्वारा भारतको धोखेमें रखकर उसके ध्यानको बँटानेकी कुचेष्टामात्र की थी, जिससे वे अपनी पूर्व-योजनानुसार भारतपर जोरदार आक्रमण कर सकें।

भा० माँ० : यद्यपि पाकिस्तान पुनः आक्रामक था, तथापि भारतने शान्ति और एकताके हितमें 'ताशकन्द-समझौते' पर हस्ताक्षर कर दिये। किन्तु ताशकन्द-समझौतेकी स्याही कठिनाईसे सूख पायी थी कि पाकिस्तानी नेताओंने भारतके विरुद्ध पुनः विष-वमन करना आरम्भ कर दिया। सीमाओंपर पुनः छेड़छाड़की घटनाएँ पाकिस्तानकी ओरसे होने लगीं।

इ० पु० : ताशकन्द-समझौतेको सबसे जबर्दस्त झटका ३० जनवरी, १९७१ को लगा, जब पाकिस्तानी एजेण्ट एक भारतीय यात्री-वायुयानको पिस्तौलकी नोकपर हरण करके लाहौर ले गये। अपने पूर्वस्वभावानुसार पाक-सरकारने इस आरोपको भी नकार दिया, जब कि ४८ घण्टे बाद वायु-यात्रियोंको आने दिया तथा वायुयानको दिन-दहाड़े जलने दिया। उलटे अपहरणकर्ता डाकुओंको राष्ट्रिय सम्मान दिया और वायुयान-अग्निकांड टेलीवीजनपर विश्वको दिखाया भी।

भा० माँ० : वायुयान अपहरण-काण्डके प्रायः दो माह उपरान्त ही पाकिस्तानने एक नये प्रकारका आक्रमण भारतपर किया। उन्होंने पूर्व-बङ्गालसे लाखों आदमियोंको भारतमें

धकेला। पूर्व-बङ्गालकी दुःखपूर्ण क्रूर घटनाओंके परिणामस्वरूप भारतीय अर्थव्यवस्था और सुरक्षापर गम्भीर प्रभाव पड़ा है। भारत पाकिस्तानके साथ नये मैत्रीपूर्ण सम्बन्धोंके युगके सूत्रपातकी सुखद कल्पना कर रहा था। १९६९ में जनतान्त्रिक अधिकारोंके लिए संघर्षरत, पाक-जनताने 'अवामी लीग'को बहुमतसे पाक-असेम्बलीमें चुनकर भेजा था, जिसके नेता शेख मुजीबुर्रहमान थे।

इ० पु० : लेकिन जनताके चुने हुए प्रतिनिधियोंको शासन-सत्ता सौंपनेको याहिया खां कब तैयार थे? इधर बातचीत चली, उधर २५ मार्चकी रात्रि पाकिस्तानी तोपोंकी गड़गड़ाहट-से गूँज उठी। ढाकाकी धरती लोहूसे रँग गयी। सोता हुआ ढाका पाक-तानाशाहोंके सैनिक उन्मादकी आगमें धधक उठा और उसके पश्चात् सदा-सदाके लिए पाक-फौजोंने पूरे बङ्गला-देशमें बौद्धिकों और नेताओंका निर्मम वध किया। जल, स्थल, नभ सेना युद्धस्तरपर बङ्गला देशपर टूट पड़ी। मैंने बड़-बड़े रक्तपात देखे हैं भारतमाता, पर ऐसे नृशंस हत्याकाण्डोंकी श्रृंखला शायद ही कभी पहले देखी हो और सुनी हो। ऐसी चीत्कारें, ऐसी बर्बरता-क्रूरता, ऐसा रोदन!

(सहसा धरती फटनेकी-सी ध्वनि होती है? पुनः तूफान-सा आता है। महाकाल प्रकट होता है। बादलोंकी गड़गड़ाहटका शब्द।)

महाकाल : हा हा हा हा………हा हा हा हा… ……सच कहते हो इतिहासपुरुष, तुम सच कहते हो। महाकालको आमन्त्रण भेजा है पाकिस्तानने। मैंने पूरे बङ्गला देशमें घूम-घूमकर जो दृश्य देखे हैं, उनसे मेरा भी कलेजा हिल उठा है।

भा० माँ० : इन अन्धे युद्ध-पिपासुओंको कोई बता दो, भारत अधिक दिनोंतक इन ९५ लाख शरणार्थियोंको न झेलेगा। भारतकी अपनी अर्थव्यवस्था है। अपनी खुशहालीकी योजनाएँ हैं। पाकने हमारी खुशहाल जनतापर भारी आर्थिक दबाव डाला है। वह पूर्वी ही नहीं, पश्चिमी भारतीय सीमारेखापर भी अपनी युद्धवाहिनी ले आया है। पूरा पाकिस्तान 'भारतको मिटा दो' के नारे लगा रहा है। पाक-तोपोंके मुख आग उगलने लगे हैं। पाक युद्ध-विमान भारतके पवित्र आकाशको चीरने लगे हैं। भारत शान्ति चाहता है, विश्व-मैत्री चाहता है, मगर ‥।

महाकाल : मगर पाकने मुझ महाकालको आमन्त्रण जो दिया है, इतिहास-पुरुष!

इ० पु० : मगर महाकाल! भारतीय रण-रथके चक्के अगर एकबार चल पड़े तो फिर दुश्मन याद रखे—धरती डोलेगी, आसमानमें दरारें पड़ेंगी। इतिहास रक्तकी स्याहीसे लिखा जायगा। प्रलयका ताण्डव होगा।

भा० माँ० : तो फिर कह दो पूरबसे, पश्चिमसे, उत्तरसे और दक्षिणसे! कह दो सूरज, चाँद, सितारोंसे; धरती और महासागरोंसे कि भारत कमजोर नहीं है। शान्त है, संयमी है, मगर कायर नहीं।

इ० पु० : मगर कबतक? भारतकी नदियाँ रक्तवर्ण हो चुकी हैं। गगन थर्रा रहा है, धरती हिल रही है। महशक्तिके होंठ फड़क रहे हैं, भारतमाँ!

भा० माँ० : ओह, इतिहासकी भृकुटियाँ तन गयी हैं। तेवर बदले हैं महाकालने। यदि सीमाके पार युद्धके बाजे बन्द न पड़े, यदि शरणार्थियोंकी वापसी न हो तो योगेश्वर, कृष्ण जानते हैं, नापाक दुश्मनसे कैसे निबटा जाता है।

समवेत स्वर : जय किसान, जय जवान, भारत महान्, जय बाँगला देश! ●

एक नजरमें :

आदर्श भारत-पाक-युद्ध

श्री 'अंगार'



आम तौरपर कहा जाता है कि 'युद्धस्य वार्ता रम्या' अर्थात् युद्धकी कहानी बड़ी मीठी हुआ करती है। उसमें भी वह युद्ध किसी आदर्शको लेकर हो तो उसकी मिठासका पूछना ही क्या ? फिर, भारतका हालका भारत-पाक-युद्ध अनेक आदर्शोंसे भरा था। पहला आदर्श तो उसका रक्षात्मक होना है, आक्रमणात्मक नहीं। युद्ध शुरू किया पाकिस्तानने और हमने उसे लड़ा बचावके लिए। दूसरा आदर्श, हमारे युद्धका था, विगत आठ महीनोंसे उन निरीह बङ्गबन्धुओं-के, मानवताको लजानेवाले पैशाचिक उत्पीडनका निराकरण और उन्हें उनके न्याय्य आत्म-शासित स्वतन्त्र 'बाँगला देश' की उपलब्धि कराना। तीसरा आदर्श था, युद्ध लड़ते हुए भी हमारी यह तीव्रतम सावधानता कि कमसे कम रक्तपात और निरागसोंका अधिकसे-अधिक बचाव। विश्वकी बड़ीसे बड़ी शक्तियाँ हमारे इस न्याय्य कदमका स्वार्थवश प्रतिरोध करनेमें अपना सर्वस्व दाँवपर लगा रही थीं, पर हम उससे तनिक नहीं डिगे। पूरे विशाल राष्ट्रका एक समवेत स्वर लेकर हमारी सेनाकी तीनों शाखाओंने इतने शीघ्र, इतना अपूर्व रण-कौशल दिखाया कि फ्रान्स, जर्मनी जैसी लड़ाकू शक्तियाँ भी दाँतोंतले उंगली दबाने लगीं। सबसे बड़ा और सबसे अन्तिम आदर्श था, शानदार विजय हासिल करनेके बावजूद हमने विजयोन्माद-पर अभूतपूर्व काबू पाया और तुरत एकतरफा युद्धविरामकी घोषणा कर अपनी शान्तिप्रियता-का बेजोड़ नमूना विश्वके सामने खड़ा कर दिया। आइये, एक नजरमें यह युद्ध देख लें।

३ दिसम्बर

पाकिस्तानी वायुसेनाने अपनी पूर्व-निश्चित योजनाके अनुसार शामको ५-४५ बजे कई भारतीय हवाईअड्डों—अमृतसर, पठानकोट, श्रीनगर, अवंतीपुर, उत्तरलाई, जोधपुर, अम्बाला और आगरापर हवाई-हमले किये। साथ ही पाकिस्तानी स्थलसेनाने भी हमारी पश्चिमी सीमामें कई स्थानोंपर आक्रमण कर दिया। उसने कई भारतीय ठिकानों—सुलेमांकी, खेमकरन, पुँछ और अन्य कई स्थानोंपर गोलाबारी की।

२५ नवम्बरको पाकिस्तानी राष्ट्रपति याहिया खाँने १० दिनके अन्दर युद्ध छिड़नेकी घोषणा की थी और अपने वक्तव्यके ठीक नवें दिन भारतपर आक्रमण कर दिया। भारतीय प्रधान-मन्त्री, रक्षामन्त्री और वित्तमन्त्री पाकिस्तानी हमलेका समाचार सुनकर अपने दौरोंसे दिल्ली लौट आये। प्रधानमन्त्रीके कलकत्तासे लौटनेके तुरन्त बाद मन्त्रिमण्डलकी आपत्कालीन बैठक हुई।

राष्ट्रपति श्री वी० वी० गिरिने आपत्कालीन स्थितिकी घोषणा कर दी।

रातके ११-५० वजे भारतीय वायुसेनाने जवाबी कारवाई की और पाकिस्तानी हवाई-अड्डों—चंदेरी, शेरकोट, सरगोधा, मुरी, मियांवाली, मसरूर (कराचीके निकट), रिसालवाला (रावलपिण्डीके निकट) और चांगामांगा (लाहौरके निकट) पर हमले किये। इन पाकिस्तानी हवाईअड्डोंपर खड़े कई विमानोंको क्षतिग्रस्त किया गया और पेट्रोल-टैंकोंमें आग लगा दी गयी। सरगोधा हवाईअड्डा बर्वाद कर दिया गया।

४ दिसम्बर

४ दिसम्वरको प्रधानमन्त्रीने अपने महत्त्वपूर्ण प्रसारणमें राष्ट्रसे कहा : 'मैं आपसे एक ऐसी घड़ीमें वात कर रही हूँ, जब कि हमारा देश और हमारी जनता बड़े संकटसे गुजर रही है। अवसे कुछ घण्टे पहले ३ दिसम्वरको शामके साढ़े पांच बजेके तुरन्त वाद पाकिस्तानने हमारे विरुद्ध अपने पूरे दल वलसहित जंग छेड़ दी है। अब पाकिस्तानने बंगला देशके विरुद्ध अपनी लड़ाईको भारतके विरुद्ध युद्धमें बदल दिया है। मुझे इस बातमें कोई सन्देह नहीं कि हमारी जनता एक होकर पाकिस्तानके विवेकहीन और अकारण आक्रमणको निर्णायक और करारी हार देगी। आक्रमणका मुकाबला करना अत्यन्त आवश्यक है और भारतीय जनता यह मुकावला साहस, संकल्प, अनुशासन और पूर्ण एकतासे करेगा।'

पाकिस्तानने भारतके विरुद्ध युद्धको औपचारिक घोषणा कर दी।

पाकिस्तानी सेनाओंने बख्तरबन्द गाड़ियाँ और तोपखानेकी मददसे छम्बपर भारी हमला बोल दिया। भारतोय सेनाने दुश्मनके अनेक सैनिक हताहत कर दिये।

फिरोजपुरमें एक पाकिस्तानी ब्रिगेडने पाकिस्तानी वायुसेना, बख्तरबन्द गाड़ियों और तोपखानेकी मददसे हुसेनीवालाके निकट भारतीय इलाकेपर आक्रमण कर दिया। हमारी सेनाने दुश्मनके कई सैनिक हताहत कर दिये और उसे पीछे धकेल दिया।

पूर्वी क्षेत्रमें भारतीय सेना कई स्थानोंसे बंगला देशमें प्रविष्ट हुई। भारतीय सेनाने मुक्तिवाहिनीके सहयोगसे कई स्थानोंको आजाद कर दिया।

भारतीय नौसेनाके पश्चिमी और पूर्वी वेड़े शत्रुके युद्धपोतोंको नष्ट करनेके लिए निकल पड़े।

५ दिसम्बर

सुरक्षा-परिषद्में भारत और पाकिस्तानको समान मानकर युद्धविरामके लिए जो प्रस्ताव पेश किया गया था, रूसने उसे अपने 'वीटो'के प्रयोगसे ठुकरा दिया।

मुक्तिवाहिनीके सहयोगसे भारतीय सेनाने बंगला देशके कई और इलाके मुक्त कराये।

पाकिस्तानी सेनाने बख्तरबन्द गाड़ियोंकी मददसे लौंगानेवालापर भारी हमला बोल दिया। भारतोय सेनाने अपनी वायुसेनाके सहयोगसे पाकिस्तानी सेनाको पीछे धकेल दिया।

पाकिस्तानकी दो बटालियनोंने अमृतसरमें रानियांपर हमला कर दिया। भारतीय सेनाने दुश्मनके कई सैनिक हताहत कर दिये और उसे पीछे ढकेल दिया।

छम्बमें दुश्मनका दूसरा हमला भी विफल कर दिया गया। दुश्मनके कई सैनिक हताहत हुए और उसे पीछे हटना पड़ा।

पुंछके निकट कस्बामें पाकिस्तानी हमला विफल कर दिया गया। भारतीय नौसेनाके एक पश्चिमी नौसैनिक दलने दो पाकिस्तानी विध्वंसकों—'खैबर' और 'शाहजहाँ'को डुबानेका साहसिक कार्य कर दिखाया। इस नौसैनिक दलने कराची बन्दरगाहके प्रतिष्ठानोंपर भी बमबारी की।

बंगालकी खाड़ीमें हमारी नौसेनाने दुश्मनकी एक पनडुब्बी क्षतिग्रस्त कर दी और चटगांव तथा काक्सबाजारपर लगातार बमबारी जारी रखी।

६ दिसम्बर

५-६ दिसम्बरकी रातको पाकिस्तानी सेनाकी लगभग दो ब्रिगेडोंने बख्तरबन्द रेजीमेंटोंकी मददसे छम्बमें दो बार भारतीय सैनिक ठिकानोंपर हमला किया। दोनों बार हमलावरोंको पीछे धकेल दिया गया।

उधर बंगला देशमें हमारी सेनाने मुक्तिवाहिनीके सहयोगसे कई इलाकोंको मुक्त कर दिया।

भारतीय नौसैनिक विमानने खुलना, चालना और मंगला बन्दरगाहोंपर प्रहार किया और चटगाँव हवाईअड्डे तथा उसके आसपासके पाक सैनिक-संस्थानोंपर आक्रमण किया।

मुक्तिवाहिनीने लालमुनीरहाटमें प्रवेश किया। भारतीय सेना दुश्मनके विरुद्ध मुक्ति-वाहिनीके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर लड़ी।

६ दिसम्बरकी रातको छम्ब दुश्मनसे खाली करा लिया गया। प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधीने संसद्में 'गण-प्रजातन्त्री बँगला देश'को भारत द्वारा मान्यताकी सूचना दी। इस अवसरपर उन्होंने कहा : 'इस समय हमारा ध्यान इस नवजात देशके राष्ट्रपिताकी ओर है।'

पाकिस्तानने भारतके साथ राजनयिक सम्बन्ध तोड़ दिये।

७ दिसम्बर

जैसोर हवाईअड्डा हमारे अधिकार में हो गया। भारतीय सेना और मुक्तिवाहिनी जैसोर छावनीमें प्रविष्ट हुई। जैसोर शहर मुक्त हुआ।

सिलहटमें भारतीय सैनिक हेलीकाप्टरोंसे उतारे गये। सिलहट और मालवी बाजार मुक्त करा दिये गये।

८ दिसम्बर

भारतीय स्थलसेनाध्यक्ष जनरल एस० एच० एफ० जे० मानेक शाने बंगला देश-स्थित पाकिस्तान-अधिकृत सेनाके अधिकारियों और अन्य सैनिक तथा कर्मचारियोंको, उनकी शोचनीय स्थिति ध्यानमें रखते हुए, तुरन्त आत्मसमर्पण करनेके लिए कहा। छम्बमें पाकिस्तानी सेनाने एक और ब्रिगेड और अधिक बख्तरबन्द गाड़ियों और अपनी वायु-सेनाकी सहायतासे भीषण हमला किया। भारतीय सेनाने दुश्मनका डटकर मुकाबला किया और उसके बड़ी संख्यामें सैनिक हताहत कर दिये।

उधर भारतीय सेनाने मुक्तिवाहिनीके सहयोगसे कोमिल्ला और ब्राह्मणबेरियाको मुक्त करा दिया।

संयुक्तराष्ट्र महासभाने प्रस्ताव पास करके भारत और पाकिस्तानको युद्ध-विराम करने और अपनी-अपनी फौजें अपने-अपने इलाकेमें वापस बुलानेका अनुरोध किया।

९ दिसम्बर

रक्षामन्त्रीने संसद्में घोषणा की कि विशाखापत्तनम्के निकट ३-४ दिसम्बरकी रातको समुद्रमें अमेरिकामें बनी सबसे बड़ी पाकिस्तानी पनडुब्बी 'गाजी' डुबा दी गयी।

बंगला देशमें भारतीय सेना और मुक्तिवाहिनीने मिलकर चाँदपुर और दाऊदमण्डी मुक्त करा दिये।

नयाछोरपर दुतरफा हमला किया गया, भारतीय सेनाकी नयाछोरमें तैनात दुश्मनकी पाकिस्तानी सेनासे भिड़न्त हुई।

भारतीय पश्चिमी नौसैनिक बेड़ेने दूसरी बार साहसिक अभियानमें ग्वादारसे कराची-तक सम्पूर्ण मकरान तटपर-बमबारीका और कराची बन्दरगाहमें कई महत्त्वपूर्ण इंधनके भण्डारोंपर आग लगा दी।

१० दिसम्बर

लक्षम मुक्त हो गया। यहाँ तैनात कमाण्डिंग अफसरने अपने अधीन ४१६ अधिकारियों और सैनिकोंसहित आत्म-समर्पण कर दिया।

छम्बमें दुश्मनने मुनव्वरतवी नदीके पार बढ़नेके लिए भारी आक्रमण किया। यहाँपर दुश्मनकी सैनिक डिवीजनकी सहायताके लिए कमसे कम दो बख्तरबन्द रेजीमेण्ठ भी थे। यहाँ घमासान लड़ाई शुरू हो गयी।

कच्छमें नगर पार करसे उत्तरमें १० मील दूर वीरावाह और विकोटपर कब्जा हुआ।

भारतने विश्वके कई देशोंके विमानोंको कराची, इस्लामाबाद और ढाकासे विदेशी नागरिकोंको निकालनेमें उनकी सुरक्षाको गारण्टी दी।

११ दिसम्बर

मेजर जनरल राव फरमान अलीने संयुक्तराष्ट्र-महासचिव ऊ थान्तको पश्चिम पाकिस्तानी सैनिकों और नागरिकोंको बंगला देशसे निकालनेमें सहायता देनेका अनुरोध किया और कहा कि 'जबतक उनको वहाँसे निकाला नहीं जाता, तबतक उनकी सुरक्षाका बन्दोबस्त किया जाय।' जनरल याहिया खाँने मेजर जनरल फरमान अलीके इस सन्देशको रद कर दिया।

जनरल मानेक शाने मेजर जनरल फरमान अलीको एक सन्देशमें बताया कि 'मुकाबला करना बेकार है, इसलिए हथियार डाल दो।' सेनाध्यक्षने मेजर जनरल फरमान अलीको एक और सन्देशमें चेतावनी दी कि वह भागनेका प्रयत्न न करे।

मुक्तिवाहिनीने भारतीय सेनाके सहयोगसे बंगला देशमें हिली, मैमनसिंह, कुष्टिया और नोआखालीको मुक्त करा दिया। हमारी सेनाने छम्ब सेक्टरमें घमासान युद्धके बाद पाकिस्तानी सेनाको मुनव्वर तवीके पश्चिमकी ओर धकेल दिया।

१२ दिसम्बर

बहुत सारे भारतीय छाताधारी सैनिकोंको ढाकापर हमला करनेके लिए ढाकाके इर्द-गिर्द उतारा गया।

१३ दिसम्बर

हमारी सेनाने ढाका घेर लिया। सेनाध्यक्ष जनरल मानेक शाने मेजर जनरल फरमान अलीको फिजूल खूनखराबा रोकनेके लिए सन्देश भेजा और कहा कि 'जो सैनिक हथियार डाल देंगे, उनके साथ उचित व्यवहार किया जायगा।'

१४ दिसम्बर

रक्षामन्त्री श्री जगजीवनरामने संसद्को युद्धके पहले दस दिनके हताहतोंकी संख्या बतायी। मृतक १९७८, घायल–५०२५ और लापता १६६२।

पाकिस्तानी सेनाके हताहतोंकी संख्या इससे बहुत ज्यादा है। इसके अलावा पाकिस्तानी नियमित सेनाके ४१०२ अफसर और सैनिक हमारी कैदमें है।

भारतीय वायुसेनाके ९ विमानचालक और ३ नेवीगेटर वीरगतिको प्राप्त हुए और ३६ विमानचालक और ३ नेवीगेटर लापता हैं।

भारतीय नौसेनाके 'खुकरी' जहाजके डूबनेसे १८ अधिकारी और १७३ नौसैनिक लापता है। रक्षामन्त्रीने टैंकों, विमानों और युद्धपोतोंके बरबाद होनेको भी सूची पेश की।

बंगला देशमें पाकिस्तानी प्रशासनके उच्चाधिकारियोंने त्यागपत्र दे दिये और रेडक्रासके तटस्थ क्षेत्रमें शरणकी याचना की। बोगरा मुक्त हो गया। पाकिस्तानी सेनाकी ९३ इन्फैण्ट्री ब्रिगेडके कमांडर, ब्रिगेडियर खदेरने दो लेफ्टिनेण्ट कर्नलों और एक मेजरके साथ ढाकाके नजदीक आत्मसमर्पण कर दिया।

बंगला देशके हरिपुर पेट्रोलियम और गैसशोधक कारखानेपर कब्जा हो गया।

सोवियत संघने अमेरिकाके भारत-पाकिस्तान युद्धविराम और सेनाओंकी वापसीके प्रस्तावपर तीसरी बार 'वीटो' कर दिया।

१५ दिसम्बर

ढाकामें पश्चिमी पाकिस्तानी सेनाके कमांडर लेफ्टिनेण्ट जनरल ए० ए० के० नियाजीने भारतीय सेनाध्यक्षसे युद्ध-विरामका अनुरोध किया। जवाबमें जनरल मानेक शाने अपने अधीन सेनासहित उन्हें १६ दिसम्बर, १९७१ को सुबह ९ बजेतक आत्मसमर्पण करनेका निर्देश दिया। सायं ५ बजेसे ढाकापर हवाईहमला रोक दिया गया।

१६ दिसम्बर

प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधीने संसद्में घोषण की कि बंगला देशमें पश्चिम पाकिस्तानी सेनाने आज दिनके ४.३१ बजे बिना शर्त हथियार डाल दिये। आत्मसमर्पण-करारपर लेफ्टिनेंण्ट जनरल नियाजीने पाकिस्तानी पूर्वी कमानकी ओरसे हस्ताक्षर किये हैं। भारतीय और बंगला देशकी सेनाओंके पूर्वी क्षेत्रमें जो० ओ० सी०-इन-सी लेफ्टिनेण्ट जनरल जगजीत सिंह अरोड़ाने आत्मसमर्पण-करार स्वीकार कर लिया।

ढाका स्वतन्त्र बंगला देशकी राजधानी बना।

प्रधानमन्त्रीने पश्चिमी क्षेत्रमें १७ दिसम्बरको रात ८ बजेसे एकतरफा युद्ध-विरामकी घोषणा कर दी।

भारत-पाक-युद्ध : एक सैनिक विश्लेषण

तीनों सेनाओंका अभूतपूर्व समन्वय

मेजर जनरल श्री रणवीर सिंह, एम० सी०

(अवकाश-प्राप्त)



यह युद्ध पाकिस्तानने तीन दिसम्बरको तीसरे पहर आरम्भ किया, जब पाक वायुसेनाने भारतके अनेक हवाईअड्डोंपर प्रथम आक्रमण किया। शत्रुका एकाएक आक्रमण, जो संयुक्त अरब गणराज्यके विरुद्ध इजराइलके हवाईहमलेकी घटिया नकल थी, पूर्णतया असफल रहा, क्योंकि इस सम्भाव्य घटनाकी हमें पहले ही आशा थी और हम इसके लिए तैयार थे।

१० दिसम्बरतक, युद्धके प्रथम सप्ताहमें ही हमारी सशस्त्र सेनाओंने लगभग सम्पूर्ण बंगला देशको मुक्त करा लिया। पाक जलसेना अपंग कर दी गयी। उसके ३ विध्वंसक नष्ट कर दिये गये। अमेरिका द्वारा भेंट की गयी 'गाजी' सहित दो पनडुब्बियाँ और अनेक छोटे युद्धपोत डुबो दिये गये। कराची बन्दरगाहपर हमने स्वयं बिना क्षति उठाये दो बार आक्रमण किया, जो एक बहुत साहसिक कार्य है। हमारी सेनाओंने अपनी सम्पूर्ण जल-श्रेष्ठता और उल्लेखनीय वायु-श्रेष्ठता स्थापित कर दी है।

पश्चिमी सीमापर, छम्बमें पाकिस्तानके एकमात्र बड़े आक्रमणको हमने रोक दिया है। हमने न केवल चिकन-नेकपर कब्जा कर लिया, बल्कि मराला मुख्यालयकी ओर बढ़ते हुए हम राजस्थान क्षेत्रमें बहुत आगे बढ़ गये। पुंछ क्षेत्रमें भी हमने शत्रुको पीछे धकेल दिया। तिथवल क्षेत्रमें हिप्पा घाटीपर अधिकार करके हमने एक महत्त्वपूर्ण मार्ग बन्द कर दिया, जिसका कश्मीरमें घुसपैठके लिए प्रयोग हो सकता था। उड़ी और पुंछके निकट हमने अनेक पाकिस्तानी चौकियाँ अपने अधिकारमें ले लीं और कारगिलसे १३६० फुट ऊँचाईपर स्थित एक चौकीपर कब्जा कर वहाँसे लेहको जानेवाली सड़कको सुरक्षित कर लिया। दक्षिणकी ओर हुसेनीवालाके कुछ क्षेत्रपर पाकिस्तानके अधिकारको हमने डेरा बाबा नानकमें रावी पुलके उस पार एक उल्लेखनीय स्थायी मोर्चा कायमकर शत्रुको निष्फल कर दिया और आगे दक्षिणमें राजस्थानमें गदरा हैदराबाद (सिंध) में हमारी उल्लेखनीय प्रगति रही जैसलमेरमें रहीमयारखांकी ओर हमारे आक्रमणसे मुलतान-कराची रेलमार्ग काटकर सिंधको पश्चिमी पाकिस्तानसे काटनेकी सम्भावना बन गयी।

पूर्वी और पश्चिमी सीमाओंपर एक सप्ताहके युद्धके विश्लेषणके पश्चात् हम अपनी सशस्त्र सेनाओंकी उपलब्धिसे सन्तुष्ट हो सकते हैं। किन्तु आश्चर्य इस बातका है कि पाकिस्तान उतना अच्छा क्यों नहीं लड़ पाया जितनी कि उससे आशा थी। या तो आरम्भसे ही उसकी सेनाओंमें पर्याप्त मनोबल नहीं था अथवा उसके सेनाधिकारियोंने अधिक बुद्धिमत्ताका

परिचय नहीं दिया। उनकी रणनीति, जैसा कि प्रकट होता है, १९६५ की भाँति छम्बको, बहुत अधिक महत्त्व देनेकी रही और यहीं वे भारी गलती कर गये। उनका लक्ष्य १९६५ की भाँति जम्मू-श्रीनगर मार्गको काटनेका प्रतीत होता था, जो कश्मीरके लिए हमारा मुख्य मार्ग है। यदि ऐसा है तो उन्हें यह ज्ञात होना चाहिए कि एक तो हम इसबार अच्छी प्रकारसे तैयार थे और हमने अच्छी मोर्चाबन्दी की हुई थी। अतः वहाँ उसका आक्रमण हमारे लिए आश्चर्यजनक न था। मुनव्वरतवीके पश्चिमी तटका हमारा रणनीतिक निष्क्रमण उनके लिए कोई वास्तविक लाभ नहीं है। दूसरे, नौशेरा, राजोरी और पुंछको जोड़नेके लिए हमने एक और मार्ग बना लिया, जो १९६५ में नहीं था। मेरे विचारमें इस क्षेत्रमें पाकिस्तानके दबावका एक ही कारण हो सकता है और वह है, मराला मुख्यालयकी ओर और फिर उसके बाद रावलपिण्डीकी ओर हमारी प्रगतिको रोकना। मराला मुख्यालयसे ही बाधा उत्पन्न करनेके लिए लाहौर और सिन्धुमें पानी छोड़ा जाता है। सियालकोट क्षेत्रके एक भागपर, जिसे चिकन-नेक कहा जाता है, हमारा अधिकार है और वहाँ यदि हमारे सेनाधिकारी ऐसा निर्णय करते हैं तो अन्ततोगत्वा हम इस मुख्यालयकी ओर बढ़ सकते हैं। किसी भी स्थितिमें इस क्षेत्रमें हमारे दबावसे पाकिस्तानको यहाँ काफी मात्रामें सैनिक, तोपखाना और गोलाबारूद रखना पड़ेगा, जिससे छम्ब क्षेत्रमें उसका दबाव और कम हो जायगा। यदि छम्ब ही उसका मुख्य लक्ष्य है तो उसकी योजनाएँ निराशाजनक रूपसे विफल हो चुकी हैं।

अपनी ओर सबसे पहली बात जिसने मुझे आकृष्ट किया, वह है तीनों सेनाओंमें उत्कृष्ट समन्वय! ऐसा आजतक नहीं हुआ। उदाहरणके लिए, जब रविवार ५ दिसम्बरको प्रातः हमारे पश्चिमी कृतिक बेड़ेने कराचीपर आक्रमण कर कमसे कम दो विध्वंसक और एक तेल-टैंकर नष्ट कर दिये और डुबो दिये, उससे हमारी जलसेना और वायुसेनाके समन्वयकी निश्चित पुष्टि होती है। पहले हमारी वायुसेनाने कराचीके सैनिक हवाईअड्डेपर आक्रमण किया और पाक वायु-सेनाको वहीं उलझा लिया, जो कराची बन्दरगाहकी सुरक्षाके प्रति इतनी आश्वस्त थी कि उसने हमारा बेड़ा रोकनेकी भी नहीं सोची। तब हमारा नौसैनिक बेड़ा कराची बन्दरगाहके निकट पहुँचा और पाकिस्तानी युद्ध-पोतोंपर आक्रमण कर उसने वहाँके महत्त्वपूर्ण प्रतिष्ठानोंपर धावा बोल दिया। इसके विपरीत पूर्वमें हमारी वायुसेनाको नौसैनिक वायुसेनासे सहयोग मिला। वायुसेना स्थलसेनाकी सहायतासे शत्रुके हवाई अड्डोंपर आक्रमण करनेमें व्यस्त रही। उसने चटगाँव तथा अन्य बन्दरगाहोंपर, महत्त्वपूर्ण प्रतिष्ठानोंपर बमबारी की और बन्दरगाहोंको अवरुद्ध कर दिया। वायु और जलसेनाओंके पूरे सहयोगके कारण हमारी सशस्त्र सेनाओंने बहुत अच्छी कार्यवाहियाँ कीं।

पहले सप्ताहके नौसैनिक-युद्धसे स्पष्ट हो जाता है कि हमारी नौसेनाको पहली बार अपना शौर्य दिखानेका अवसर प्राप्त हुआ और उसने आशातीत कार्य कर दिखाया। हमारे नौसैनिक अधिकारियोंने अपने युद्धपोतोंसे अधिकतम लाभ उठाया है। पूर्वी सीमापर विक्रांतको भेजना सामरिक दृष्टिमें एक बहुत दूरदर्शितापूर्ण निर्णय था। कराचीमें शेरको उसीकी मांदमें घुसकर मारनेमें हमारी सेनाने थोड़ा खतरा लिया और उसका हमें बहुत लाभ भी मिला।

आश्चर्य होता है कि कैसे पश्चिमी नौसैनिक बेड़ा कराचीके निकट पहुंच गया और शत्रुको आभास भी नहीं हुआ। मैं अपनी कार्यवाहियोंकी पूरी सूचनाकी उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रहा हूं। जब पूरी घटनाको प्रचारित किया जायगा, मेरा विश्वास है कि इससे नौसैनिक रणनीतिमें नये मोड़ आयेंगे।

प्रथम सप्ताहके युद्धकी एक अन्य विशेषता यह रही कि यह युद्ध गोलाबारीकी शक्तिका युद्ध सिद्ध हुआ। चाहे विमानभेदी तोपें हों या मैदानी तोपखाना या हवाई-आक्रमण, हमारी गोलाबारी अधिक संकेन्द्रित, तीव्र और सटोक थी। इसबार हमारी सेनाओंने १९६५ से भी अधिक पराक्रमका प्रदर्शन किया। केवल अमृतसरमें ही एक रेजीमेंटने शत्रुके ७ विमान गिराये और ५ अन्यको क्षति पहुँचायी। एक सप्ताहमें हमने शत्रुके काफी विमान गिराये, विशेषकर यदि हम यह बात ध्यानमें रखें कि हम छोटी विमानभेदी तोपोंका प्रयोग कर रहे हैं। शत्रुकी तोपोंको शान्त करनेमें हमारे मैदानी तोपखानेकी कार्यवाही अत्यधिक तीव्र और सफल रही। एक क्षेत्रीय कमांडरने, जिसने हमारी सेना द्वारा अधिकृत कुछ क्षेत्रोंकी यात्रा की थी, मुझे बताया कि शत्रुके ठिकानोंपर हमारी जवाबी गोलाबारी बहुत शानदार रही है।

एक अन्य तत्त्व, जिसने काफी सीमातक हमारी सफलताओंमें योग दिया, वह है, इसबार हमारी सरकारने सशस्त्र सेनाओंको अपने लक्ष्य स्पष्ट बता दिये और रणनीति-नियोजनका कार्य बिना किसी बाधाके योग्य सेनाधिकारियोंपर छोड़ दिया। मेरा विचार है कि यह महत्त्वपूर्ण कार्य इसबार पहली बार हुआ है। हमारे सेनाधिकारियोंने सभी सीमाओं-पर अपनी योग्यताका अच्छा परिचय दिया।

पश्चिमी सीमापर, उनकी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि यह है कि यद्यपि उन्होंने पाकिस्तानके मुख्य आक्रमण (यदि छम्बपर आक्रमणको ऐसा कहा जा सके) को सफलतापूर्वक झेल लिया और सिंधको काटनेकी आशंका पैदा कर दी। उन्होंने शत्रुको तब भी यह अनुमान लगाने नहीं दिया कि हमारा मुख्य आक्रमण कहाँ होगा। मेरा विचार है कि यह आक्रमण हमारी सेनाओं द्वारा सिंधको काटने या लगभग काटनेके पश्चात् होता और इससे पाक-सेनाएँ अस्त-व्यस्त हो जातीं।

मुझे याहिया खाँ और स्थलसेनाध्यक्ष अब्दुल हमीदकी अभी भी अच्छी तरह याद है। १९३६ से १९३९ तक भारतीय सैनिक अकादमीमें हम तीनों साथ-साथ थे। याहिया खाँ, जिसे उस समय अपने भविष्यके बारेमें पता नहीं हो सकता था, काफी मैत्रीपूर्ण था। अब्दुल हमीद एक बुद्धिमान् और कुशाग्रबुद्धि व्यक्ति था। बादमें मैं उससे १९४६ में स्टाफ कालेज, क्वेटामें मिला। अन्तिम बार मैं उससे १९६३ में लन्दनमें मिला था। मेरा ध्यान है कि याहिया खाँसे मैं १९४६ के पश्चात् नहीं मिला। आज ये दोनों पाक सैनिक-परिषदके प्रमुख नेताओंके रूपमें अपने गलत कार्योंके कारण अपने देशका ही विभाजन करा रहे हैं। मुझे दोनोंके लिए बहुत खेद है।

•

उपासनामें श्री राधा-तत्त्व

डॉ० केशवदेव शर्मा,

एम० ए०, पी एच० डी०,

★

[श्रीराधा चिरंतन सत्य आह्लादिनी शक्ति है। ये शक्तिमान् श्रीकृष्णसे अभिन्न शाश्वत तत्त्व हैं। उन्हें आधुनिक ऐतिहासिकताकी कारामें आबद्ध नहीं किया जा सकता। वेदमें तथा व्रजमें ये 'श्री जी' के नामसे प्रसिद्ध हैं। श्रीसूक्तमें इन्हींकी स्तुति है।—सम्पादक]

वैष्णव-भक्तिमें राधाका समावेश कब हुआ, यह निर्विवाद रूपसे नहीं कहा जा सकता। राधाका जो स्वरूप आज भक्ति-सम्प्रदायमें दृष्टिगत होता है, वही एक सहस्र वर्ष पूर्व रहा होगा, यह कहना कठिन है। कृष्णभक्ति-शाखाके प्रत्येक वैष्णव-सम्प्रदायमें राधाको किसी-न-किसी रूपमें मान्यता प्राप्त हुई है तथा उसीके अनुसार राधाके स्वरूप और शक्तिकी कल्पना की गयी है। राधाके उद्भवविषयक इतने अधिक पौराणिक आख्यान आज उपलब्ध होते हैं कि उनके आधारपर यह निर्णय सम्भव नहीं कि राधाका यथार्थ रूप आरम्भमें क्या रहा होगा। जो लोग राधाको सामान्य नारी मानते हैं वे भी उसके वंश, परिवार, गोत्र तथा जन्मस्थान आदिका कोई ऐतिहासिक विवरण नहीं देते। अतएव परिस्थिति बड़ी विषम हो जाती है। यदि राधाका नाम श्रीमद्भागवतमें उपलब्ध हो गया होता तथा केवल इतना ही न होता कि **कलिन्दोऽद्भूतायास्तटमनुचरन्तीं पशुपजाम्,** तो निश्चित हो वहींसे इस परम्पराकी कड़ीका सन्धान जुड़ जाता। किन्तु 'राधा' नामके अभावकी पहेलीने इस कार्यको और दुरूह कर डाला। यही कारण है कि प्रत्येक सम्प्रदायने अपनी-अपनी मान्यताके अनुरूप राधाके स्वरूप का वर्णन किया है। फिर भी समष्टि रूपसे यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकते कि 'राधा' क्या है अथवा राधाभाव क्या है।

कुछ विद्वान् राधाको केवल लोक-मानसकी सृष्टि मानते हैं। किन्तु यह तो देखना ही पड़ेगा कि लोक-मानसकी सृष्टिकी मान्यता भी राधाको कब प्राप्त हुई? वैष्णव-सम्प्रदायोंमें राधा उसी प्रकार अनादि है जिस प्रकार भगवान् श्रीकृष्ण। दोनोंके स्वरूप भी एक ही हैं। इस प्रकार ज्ञात होता है कि वैष्णव दार्शनिक राधाको इतिहासके काल-क्रमकी कसौटीपर परखनेके लिए सचेष्ट नहीं। फिर भी साधारण मानवकी यह प्रवृत्ति रहती है कि वेदोंतकसे

राधाके सम्बन्धमें कुछ-न-कुछ ज्ञात कर लिया जाय। परिणामस्वरूप ऋग्वेदके स्तोत्रं राधानां ते (१.२०.२९) नामक सूक्तसे 'राधा' शब्दको लेकर दुस्साहस भी किया गया, यद्यपि यहाँ 'राधा' नामवाचक शब्द नहीं है। इसी प्रकार अन्य दो-एक स्थलोंके विषयमें भी ऐसा ही सोचा गया है। यदि वास्तविक रूपसे राधाके स्वरूपपर विचार किया जाय तो ज्ञात होता है कि वैदिक वाङ्मयमें 'राधा'को इस रूपमें घटित नहीं किया गया है, वहाँ 'राधा' शब्द धन, अन्न, पूजा आदि अर्थोंमें प्रयुक्त हुआ हैं।

जो राधा आज हमारे जीवनमें इतनी घुल-मिल गयी है, उसके सम्बन्धमें यदि हम विचार करें तो ज्ञात होता है कि उसका वर्णन भागवतके पूर्वके ग्रन्थोंमें उसी प्रकार नहीं, है जिस प्रकार कि आगेके ग्रन्थोंमें है। शोधके आधारपर यह निर्णय किया गया है कि अनुमानतः श्रीमद्भागवतका रचनाकाल ईसाकी छठी शताब्दी है। अतएव सिद्ध होता है कि राधाको इस प्रकारका गौरव सम्भवतः श्रीमद्भागवत तथा उससे आगेके कालमें हो प्राप्त हुआ हो। श्रीमद्-भागवतमें पुराणोंका रचनाक्रम इस प्रकार दिया हुआ है।

ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च शैवं लैङ्गं सगारुडम्।
नारदीयं भागवतमाग्नेयं स्कान्दसंज्ञितम्॥
भविष्यं ब्रह्मवैवर्त - मार्कण्डेयं सवामनम्।
वाराह-मात्स्य-कौर्मं च ब्रह्माण्डाख्यं च त्रिषट्॥

तात्पर्य यह कि महाभारत, ब्रह्मपुराण या विष्णुपुराण, भागवत-पूर्ववर्ती इन किन्हीं भी पुराणोंमें राधाका नाम नहीं मिलता। ईसा-पूर्व प्रथम शतकमें लिखे महाकवि भासके नाटकों तकमें 'राधा' नामका पता नहीं। केवल भागवतमें राधाके सम्बन्धमें इस प्रकार कथन है।

अन्तर्हिते भगवति सहसैव व्रजाङ्गनाः।
अतप्यंस्तमचक्षाणाः करिण्य इव यूथपम्॥
(भाग० १०.३०.१)

अर्थात् रासलीलाके बीच गोपियोंका गर्व दूर करनेके लिए भगवान् कृष्ण अन्तर्धान हो गये तो गोपियाँ वृन्दावनके वृक्ष और लता आदिसे भगवान् कृष्णका पता पूछने लगीं। उस समय उन्होंने एक स्थानपर भगवान्‌के चरण-चिह्न देखे और आपसमें कहने लगीं कि अवश्य ही ये चरण-चिह्न नन्दनन्दन श्यामसुन्दरके हैं, क्योंकि इनमें ध्वजा, कमल, वज्र, अंकुश और गो आदिके चिह्न स्पष्ट ही दीख पड़ रहे हैं। उन चरण-चिह्नों द्वारा भगवान्‌को ढूंढ़ती गोपियाँ आगे बढ़ीं, तब उन्हें—

कस्याः पदानि चेतानि यातायाः नन्दसूनुना।
अंसन्यस्तप्रकोष्ठायाः करेणोः करिणाः यथा॥

अर्थात् श्रीकृष्णके साथ किसी व्रज-युवतीके भी चरण-चिह्न दीख पड़े। जिन्हें देखकर वे व्याकुल हो गयीं और आपसमें कहने लगीं कि 'निश्चय ही ये चरण-चिह्न श्यामसुन्दर नन्दनन्दनके

साथ उनके कन्धेपर हाथ रखकर चलनेवाली किसी बड़भागिनीके हैं, जो इस प्रकार प्रतीत होती है जैसे कोई हथिनी अपने प्रियतम गजराजके साथ गयी हो। आगे—

अनयाऽऽराधितो नूनं भगवान् हरिरीश्वरः।
यन्नो विहाय गोविन्दः प्रीतो यामनयद्रहः॥

इस पंक्तियोंसे ज्ञात होता है कि अवश्य ही सर्वशक्तिमान् भगवान् श्रीकृष्णकी इस गोपिकाने आराधना की है। तभी तो वे हमें छोड़कर प्रसन्न हो इसे एकान्तमें ले गये।

भागवतके इस उद्धरणसे प्रतीत होता है कि यह गोपी भगवान् श्रीकृष्णकी आराधना करनेके कारण उन्हें अत्यन्त प्रिय थीं; फिर भी भागवतकारने इसका नाम 'राधा' नहीं बताया। संभव है, बादमें 'आराधित' शब्दसे 'राधा' की परिकल्पना कर ली गयी हो, जैसा कि 'बृहद्-ब्रह्मसंहिता' में 'राधा' शब्दका संकेत दिया गया है।

त्वया चाऽऽराधितो यस्मादहं कुञ्जमहोत्सवे।
राधेति नाम विख्याता रासलीला-विधायिका॥

स्पष्ट है कि 'आराधना' शब्दके आधारपर 'राधा' शब्दकी उद्भावना कर लेना कठिन कार्य नहीं। जो श्रीकृष्णकी आराधिका है, वही राधा या राधिका है।

वैष्णवधर्मके आचार्य वल्लभ, निम्बार्क अथवा चैतन्य माया अथवा शक्तिको भगवान्‌की ह्लादिनी-शक्ति मानते ही हैं। सम्भव है, राधा उसी ह्लादिनी-शक्तिका रूपान्तर हो। जीव-गोस्वामीने 'उज्ज्वल-नीलमणि' नामक ग्रन्थकी टीकामें राधाको श्रीकृष्णकी स्वरूपाह्लादिनी शक्ति कहा है।

चतुर्थ-पंचम शताब्दीतक शिव और पार्वती हिन्दुओंके उपास्यदेव प्रचलित हो गये थे। कुछ विद्वानोंकी सम्मतिमें सम्भवतः इन्हीं शिव और पार्वतीके अनुकरणपर हिन्दुओंमें विष्णु और श्रीकी पूजा प्रारम्भ हुई हो—विष्णु-पुराणमें भी विष्णुके साथ लक्ष्मी जुड़ गयी हो। महाभारतमें नारायणीय पर्वमें विष्णुको श्वेतद्वीपका निवासी बताया गया है। नारायणका निवास-स्थान भी जल ही है, यथा :

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।
ता यदस्यायनं प्रोक्तं तेन नारायणः स्मृत॥
(मनु० १.१०)

नारायण और विष्णु एक ही हैं। नारायणके साथ लक्ष्मी रहती है, जैसा कि विष्णु-पुराणके—

तृष्णा लक्ष्मो जगत्स्वामी लोभो नारायणः परः।
(वि० १८.३१)

इस कथनमें लक्ष्मीको तृष्णा तथा नारायणको लोभरूपसे वर्णित कर परस्परका सम्बन्ध स्थापित किया गया है। यजुर्वेद के पुरुष-सूक्तमें श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यौ इस कथन द्वारा यज्ञ-

कूटस्थकी अनुभूति

आचार्य श्री रामरूप तिवारी, वेदान्त-भूषण



'कूटस्थ' हमारे चेतन आत्माको कहते हैं, जो अविनाशी और सच्चिदानन्दस्वरूप है। वह चित्-रूप है। इस चित्का बुद्धिमें आभास पड़ता है, तो उस आभासयुक्त बुद्धिको 'चिदाभास' कहते हैं। इस चिदाभासमें कूटस्थ चित्के सम्पूर्ण लक्षण तो नहीं होते, लेकिन उसमें प्रतीत होनेवाला चेतनाका भास उसी चित्का परिणाम है। यह चिदाभास बुद्धि तथा देहादिके संगसे विकारयुक्त होता है, लेकिन इसकी स्फुरण-रूपता चित्की भाँति भासती है। यही मनुष्यमें जीवरूप है। यही बन्धनरूप है, जब विकारोंसे युक्त होती है। लेकिन जब देहादिके तादात्म्यसे अपनेको मुक्त कर लेती है, तो यही मोक्षका हेतु बन जाती है। अज्ञान, ज्ञान, भोक्तृत्व, कर्तृत्व, सब इसीमें हैं और ये ही भ्रान्तिके कारण होते हैं।

चिदाभास देहादि और कूटस्थ दोनोंसे प्रभावित होता है। मुख्यरूपसे इसकी स्फुरणरूप चेतना कूटस्थके कारण होती है। इसीने कूटस्थ आत्माको आवृत कर रखा है। इसकी स्फुरणरूप चेतना कूटस्थकी अविनाशी चेतनाको प्रत्यक्ष नहीं होने देती।

पञ्चदशीकारने दृष्टान्तसे यह बात भलीभाँति समझायी है। आकाशस्थ सूर्यसे प्रकाशित दीवालपर दर्पण द्वारा पड़ा प्रकाश जैसे सूर्यके सामान्य प्रकाशसे भिन्न होता है, वैसे ही कूटस्थकी चेतना बुद्धि द्वारा आभासित होकर कूटस्थकी सामान्य चेतनासे भिन्न होती है। जिस प्रकार दर्पणमें पड़ा सूर्यका प्रकाश प्रतिबिम्बित होकर सूर्यके सामान्य प्रकाशको आवृत करता है, उसी प्रकार बुद्धि द्वारा कूटस्थकी चेतनाका आभास कूटस्थकी सामान्य चेतनाको आवृत कर लेता है। इसी कारण कूटस्थकी चेतनाका ज्ञान नहीं हो पाता। इस चिदाभासरूपी बुद्धिमें प्रतिबिम्बित कूटस्थकी चेतना दर्पणमें प्रतिबिम्बित सूर्य-प्रकाशकी भाँति विशेष चेतनाका रूप धारण कर लेती है।

मानवमें यह विशेष चेतना सुषुप्ति तथा मूर्छामें प्रतीत नहीं होती, क्योंकि बुद्धि, जिसमें कूटस्थकी चेतना प्रतिभासित होती है, वहाँ लयको प्राप्त हो जाती है। देहमें दो चैतन्य हैं : एक कूटस्थका सामान्य चैतन्य और दूसरा, बुद्धिस्थित चिदाभासका विशेष चैतन्य। दीवालपर पड़े अनेक दर्पणों द्वारा प्रक्षिप्त मंडलाकार विशेष प्रकाशोंके अन्तरस्थान या मध्यमें दूसरा सूर्यका सामान्य प्रकाश स्पष्ट दीखता है। वह प्रकाश दर्पण आदिके हटा लेनेपर उन दर्पणों द्वारा क्षिप्त प्रकाशोंके अभावमें दीवालपर स्वयं प्रकाश करता है।

उपर्युक्त दृष्टान्तकी भाँति चित्-प्रतिबिम्बसे युक्त बुद्धिवृत्तियोंकी सन्धिको जाग्रत्-अवस्थामें और उनके अभावको सुषुप्तिमें केवल कूटस्थ ही प्रकाशित करता है। इस प्रकार कूटस्थको उन वृत्तियोंसे भिन्न समझाना चाहिए। कूटस्थकी पहचान और अपरोक्ष ज्ञानका यही एक सुन्दर तरीका है। सब वृत्तियोंकी सन्धियाँ—जब एक वृत्ति नष्ट होकर दूसरी वृत्ति उत्पन्न होनेको होती है तथा उनका अभाव जिस निर्विकार चैतन्यसे प्रकाशित अथवा ज्ञात होते हैं, उसे 'कूटस्थ' कहते हैं। कूटस्थका ज्ञान वृत्त्यभाव (वृत्तिके अभाव) के साक्षीरूपमें ही सम्भव है। जैसे सूर्यका प्रकाश दर्पणमें प्रतिबिम्बित होकर अधिक हो जाता है, उसी प्रकार अहंकारादि वृत्तियोंमें भी एक कूटस्थ चैतन्य और दूसरा वृत्तियोंका अवभासक चिदाभास चैतन्य दोनों मिलकर अधिक चैतन्यता प्रकट करते हैं। इसीलिए वृत्तियोंमें सन्धियोंसे अधिक स्पष्टता पायी जाती है।

जाग्रत् और स्वप्नमें वृत्तियाँ रुक-रुककर उत्पन्न होती हैं और सुषुप्ति तथा मूर्छामें सभी वृत्तियाँ विलीन हो जाती हैं। वृत्तियोंके सन्धिकाल तथा अभावमें साक्षीरूपसे कूटस्थकी अनुभूति होती है। चिदाभास घटका ज्ञान कराता है, लेकिन जिस ज्ञानसे चिदाभास जानकारी कराता है, वह ज्ञान कूटस्थका ही होता है। ज्ञानके ज्ञानका नाम 'अनुव्यवसाय' है।

अन्त:करणके परिणामको 'वृत्ति' कहते हैं। जब हम बाह्य पदार्थको देखते-सुनते या छूते हैं अथवा मनमें जब कोई विचार आता है, तो बाह्य पदार्थ अथवा मनके विचारके अनुसार अन्त:करणमें ज्ञानरूप परिणाम होनेवालेको ही वृत्ति कहते हैं।

ऊपर कथित दो चैतन्योंमें—एक कूटस्थका तथा दूसरा चिदाभासका—जिस चैतन्यका जन्म तथा नाश वृत्तिके उदय तथा विलयपर दीख पड़ते हैं, वह अकूटस्थ है और जो चैतन्य, अविकारी, एकरस, अखंड ज्ञानस्वरूप है, वह कूटस्थ है।

देह, इन्द्रिय, मन आदिसे युक्त अर्थात् स्थूल-सूक्ष्म दोनों शरीरोंसे युक्त जीवाभास-चिदाभासरूप भ्रमका अधिष्ठान चैतन्य ही वेदान्तोंमें 'कूटस्थ' शब्दका अर्थ कहा गया है।

तत् त्वम् असि इस महावाक्यमें 'त्वम्' पदका लक्ष्यार्थ शोधितबुद्धिसे विवेचित कूटस्थ ही है।

बुद्धिके धर्मों, कर्तृत्व आदिको और 'स्फूर्ति' नामक आत्माके धर्मको धारण करता हुआ चिदाभास केवल आभासमात्र है, इसलिए कल्पित है। कूटस्थ ही सत् है। उसका ज्ञान विवेक, श्रवण, मनन, निदिध्यासन द्वारा होता है। कूटस्थ तो असंग ही है। जन्म, जरा, रोग आदिसे उसमें कभी कुछ अतिशय नहीं होता। इसका सदैव विचार करनेपर वृत्तियोंकी सन्धियों तथा अभावमें जो चैतन्य रहता है, उसमें तद्रूपता स्थापित कर कूटस्थकी अनुभूति सहज हो जाती है।

•

राधावल्लभ-सम्प्रदायका

व्रजभाषा गद्य-साहित्य

श्री प्रेमनारायण श्रीवास्तव 'प्रियादास', एम० ए०



विक्रमकी १६वीं और १७वीं शताब्दी भक्तिके क्षेत्रमें व्रजभाषाके लिए 'स्वर्ण-अवसर' लेकर अवतरित हुई थी। व्रजभाषाके विपुल साहित्यका रचनाकाल भी यही माना जाता है। तत्कालीन परिस्थितियाँ चाहे जैसी भी रही हों, यह निर्विवाद कहा जा सकता है कि हिन्दू, मुस्लिम, विदेशी शासक, शिक्षित, अशिक्षित तथा अन्यान्य सभी भाषा-विद् व्रजभाषासे प्रभावित होकर भाव-विभोर हुए बिना नहीं रहे। 'हमारे व्रजवानी ही वेद' कहकर इसे वेदोंकी कोटितक पहुँचा दिया गया। आज भी व्रजवासी स्नेह-सिञ्चित हृदयसे अपने 'कारे कनुआ' और किशोरी राधाके मिलन-गीत गुन-गुनाकर बावले हो उठते हैं। व्रजकी गँवार गोपियोंने 'ततथेई' की थापपर जिसे नचाया, रीझ-खीझमें जिस वाणीका प्रयोग अपने अभिन्न सखा श्रीकृष्णके प्रति किया, वह व्रजको ही तो मधुर वाणी थी!

व्रजके विभिन्न सम्प्रदायोंमें व्रजभाषा पद्य-साहित्यका जितना प्रचार और प्रसार हुआ, उतना गद्य-साहित्यका तो नहीं कहा जा सकता। फिर भी व्रजभाषा गद्य-साहित्यका जितना भो अंश उपलब्ध होता है, उससे निश्चय ही उसके महत्त्वका ज्ञान हो जाता है।

राधा-वल्लभ-सम्प्रदायके प्रवर्तक आचार्य गो० श्री हितहरिवंशजी थे, जिनके दो गद्यात्मक पत्र देखनेमें आते हैं। ये पत्रद्वय श्री हिताचार्य महाप्रभुने सं० १६०० विक्रमके लगभग अपने प्रिय शिष्य वीठलदासके प्रति लिखे थे, जो जूनागढ़में दीवानके पदपर आरूढ़ थे। प्रथम पत्रका कुछ अंश इस प्रकार है :

> 'श्रीसकल - गुणसम्पन्न रसरीति - बढ़ावन चिरंजीव मेरे प्राणनके प्राण वीठलदास जोग लिखितं श्रीहरिवंश जोरी सुमिरन बंचनो। जोरी सुमिरन मत्त रहो, जोरी जोहैं सुख बरसत हैं। तुम कुशल स्वरूप हो, तिहारे हस्ताक्षर बारम्बार आवतहैं।'

द्वितीय पत्रीका भी रूप देखिये : 'श्री वृषभानुनन्दनी जयति ॥ जोग लिखितं श्री हरिवंश वीठलदासके कोटि-कोटि अपराध मैं खेबी, आगले पाछिले।

बीठलदास मेरे प्राण हैं। जो शास्त्रमर्यादा सत्य है और गुरुमर्यादा ऐसे ही सत्य है तो व्रज-नव-तरुणि-कदम्ब-चूड़ामणि श्रीराधे तिहारे स्थापे गुरुमार्गविषै अविश्वास अज्ञानीकौं होत है, तातें यह मर्यादा राखनौं। तुम दोऊ सफल आनन्द बरसौ। बीठलदास कौं अहो सींचनौ।'

उक्त पत्रोंकी व्रजभाषा अपने विशुद्ध प्राचीन रूपमें परिलक्षित होती है। सहज-प्रवाहमयता, सरसता तथा रचना-सौन्दर्यकी दृष्टिसे शैलीका पुरातन रूप मुखरित हो उठा है। लेखक और पाठकके हृद्-गत भावोंके उद्घाटनमें भी यह भाषा सक्षम है।

गो० हितहरिवंशजीकी इन दो गद्य-पत्रिकाओंके पश्चात् राधावल्लभ-सम्प्रदायके सिद्धान्तोंका प्रतिपादन करनेवाला श्री ध्रुवदासजीकृत 'सिद्धान्त-विचार' नामक गद्य-वार्ताका एक अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ उल्लेखनीय है। इसका रचनाकाल १६५० वि० के लगभग माना जाता है। 'सिद्धान्त-विचार'में प्रधानतया प्रेमलक्षणा भक्तिका विशद विवेचन किया गया है। इस विषयका वर्णन जिस सौन्दर्य-माधुर्य एवं विवेचनात्मक ढंगसे उक्त गद्य-ग्रन्थमें उपलब्ध होता है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। ग्रन्थका प्रारम्भ ही प्रेमकी व्याख्यासे हुआ है :

'जैसे सिन्धुमें सीप भरि लीजै, प्रेम नेम कौ लच्छन कहा। प्रेमको निजरूप चाह, चटपटी, अधीनता, उज्ज्वलता, एकरस कोमलता, स्निग्धता, सरसता, सदा एकरस रुचितरंग बढ़ती रहै। सहज सुछन्द मधुरता, मादकता, जाकौ आदि-अन्त नाहीं, छिन-छिन नूतनता स्वाद अरु नेम अनेक भाँति है।'

'जहाँ नायक-नायिका वरनन कियौ है, नायक अपनो सुख चाहै नाइका अपनो रस चाहै, सो यह प्रेम न होइ, साधारण सुखभोग है। जब ताईं अपनौ-अपनो सुख चाहिए तब ताईं प्रेम कहाँ पाइये। दोइ सुख, दोइ मन, दोइ रुचि जब ताईं एक न होई तब ताईं प्रेम कहाँ ?'

प्रेमकी प्रधानता, प्रेम-नियमके सम्बन्धका स्पष्ट चित्रण विवेचनात्मक शैलीमें हुआ है। अन्तमें प्रेमलक्षणा भक्तिको ही प्रधानता दी गयी है। यही इस ग्रन्थका प्रतिपाद्य विषय है। साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्वके व्रजभाषा गद्यका यह नमूना आज भी अपने माधर्य-भावसे जन-मानसको रस-सिक्त कर देता है।

सं० १६६० वि० के लगभग गो० वनचन्द्रजीके शिष्य श्री चतुर्भुजदासजीने 'द्वादश यश' नामक गद्य-ग्रन्थकी रचना की। यद्यपि यह ग्रन्थ दोहा, चौपाई तथा छन्दोंमें ही लिखा गया है, तथापि कहीं-कहीं गद्यवार्ताका भी प्रयोग हुआ है। कुछ अंश द्रष्टव्य है :

'जौं लगि संसार सौं, माया सौं तथा देह सौं विरक्ति न उपजै तौं लगि गोविन्द हृदयमें न आवैं। जब झूठे करि जानै तब प्रीति करै ता अर्थ हितोपदेश यश। कोऊ हीन जाति अथवा पातकी डराइ कि हम गोविन्द कैसे भजहिं ताके केवल प्रेम-प्रधान कोऊ भजो।'

१७वीं शताब्दीके उत्तरार्धमें श्री लालस्वामीके शिष्य दामोदर स्वामीकी भक्ति-भेद-सिद्धान्त' नामक एक अन्य गद्यरचना प्रकाशमें आयी। इस गद्यवार्तामें लेखकने बड़ी ही स्पष्ट और नपी-तुली भाषामें भक्तिके भेदोंपर अपने विचार व्यक्त किये हैं। संस्कृतनिष्ठ शब्दोंके सम्मिश्रणसे व्रजभाषाका मूलरूप दब-सा गया है। एक उदाहरण प्रस्तुत है :

'हृदयमें अलौकिक परमानन्द सुख उपजै, ताके आगे सर्वसुख तुच्छ लगैं। धन, राज्य, जस, कलत्रसुख ये तौ नस्वर ही हैं, मुक्ति-सुख अविनासी हैं, तेऊ तुच्छ लगैं, परमानन्दके आगैं। तातैं सर्वोपरि यही सुख है।'

विक्रम सं० १७१४ के लगभग प्राणनाथजीने 'हस्तामलक' नामक गद्यग्रन्थकी रचना की थी। आप श्री दामोदरचन्द्रजीके शिष्य थे। इस ग्रन्थमें रसोपासनासे संवलित विवादास्पद गद्यवार्ता प्रस्तुत की गयी है। इस भाषाका रूप गो० हितहरिवंशजीकी गद्य-पत्रिकाओंसे कुछ मिलता-जुलता-सा है। इष्टके ऐश्वर्य-माधुर्यमय रूपका चित्रण करनेमें इसका बड़ा महत्त्व है। भाषाकी दृष्टिसे यदि व्रजभाषाका मूलरूप इसे कह दिया जाय, तो कोई अत्युक्ति न होगी। सखीभावोपासना-सम्बन्धी एक उद्धरण प्रस्तुत है :

'ललितादिक बिनु नित्य-विहारके देखिवेकौ कोई अधिकार नाहीं। इनको प्रेम सिन्धुसमान है जामें अनन्त गिरि समाहिं। सो यह सपत्नीभाव क्यों प्रगट भयो ? जब वेदने प्रभुकी स्तुति की तब किशोररूप प्रभु कौ दरसन भयो। तब कमनीय मूर्ति देखि कामनी भाव उपजि आयो। जो श्री ठकुरानीजीको संयुक्त दरसन होतो, तो दासीभाव उपजतो। तातैं श्री ठकुरानीजीके केलिको दरसन नाहीं पावतु।'

१८वीं शताब्दीके ही पूर्वार्धमें गो० श्री रसिकलालजीने 'हित-चतुरासी'की टीका की जो भाषाकी दृष्टिसे 'हस्तामलक'से मिलती-जुलती है। अन्य टीकाओंकी दृष्टिसे इसकी भाषा अपने शुद्ध टकसाली रूपमें दिखाई नहीं देती।

विक्रमकी १८वीं शताब्दीके उत्तरार्धमें श्री अनन्य अलीजीने एक 'स्वप्न-विलास' नामक गद्य-ग्रन्थकी रचना की। यह ढाई सौ वर्ष पूर्वकी रचना होनेपर भी भावव्यंजनाकी दृष्टिसे पर्याप्त पुष्ट और प्रांजल भाषामें लिखा गया है। 'स्वप्न-विलास' में १५ प्रसङ्ग हैं। वस्तुतः अनन्य अलिजीकी वाणीका मुख्य विषय युगल-प्रेमलीला-वर्णन ही है; फिर भी अन्य प्रसङ्ग स्वभावतः आ गये हैं। मानसी-सेवा भाव-प्रधान होती है। भावके अभावमें मानसी-सेवाका रूप समझमें नहीं आता। अनन्य अलीजी मानसी-सेवामें सिद्धहस्त थे। एक उपयुक्त उद्धरण प्रस्तुत है :

'इक दिन मोकौं जुर आयौ। तातैं मेरौ शरीर बहुत काहिल भयौ। कछु सुधि रही नहीं। तब हौं मानसीमें लड़ैंतीकौं ब्यारू करवानौ भूलि गयौ। तब मोकौं रात्रि आधि गयें पाछैं नींद आयी। तब मोकौं सपनेमें कोऊ कुटीमैं तैं पुकारत है— 'अनन्य अली तूं उठि, हमकौं ब्यारू कराव, हम बड़ी वेरके बैठि रहे हैं, बड़ी अबार

भई है।' मैं सपनेमें सुनिकैं जागि उठयो, चौंकि पर्यो। सावधान भयो तब मोकों सुधि आयी। तब मैं सुमिरन कर मन लगाइ ब्यारू करायी।'

सं १७९१ वि० के लगभग श्री हितरूपलालजीके शिष्य प्रेमदासजीने 'हित-चतुरासी'की टीका व्रजभाषा-गद्यमें की, जो हित-चतुरासीकी सभी टीकाओंमें श्रेष्ठतम मानी जाती है। प्रेम-रसकी विभिन्न दशाओं, निकुञ्जकी शोभाका विशद वर्णन काव्य-शैलीमें हुआ है, जिसमें अलंकारोंका सौन्दर्य भी निखर उठा है। श्री राधाके स्वरूपका वर्णन करनेमें तो मानो आपने अपने भावोंको मूर्त-रूप प्रदान कर दिया है। एक उद्धरण देखिये।

'श्री लाड़िलीजू कैसी हैं, जिनके अंगनिकी छबि आगैं औंटयौ कंचन प्रतीत भाग है। महा-मनोहर तनसुखकी झूमक सारी झमक रही है। तामैं कंचनके फूल झिलमिलाई रहे हैं। जिनकौ मुख मन्द मुसिकानि सहित डहडहाई रह्यौ है। तापर घूंघरवारी अलकैं छूटि रही हैं और नेत्रनिमें सहज ही कटाक्षनकी चितवनि है।'

सं० १८४१ के लगभग प्रियादासजी-कृत 'सेवक-चरित' नामक एक गद्य-पद्यात्मक ग्रन्थ प्रकाशमें आया, जिसमें सेवकजीकी जन्म-बधाइयोंके सम्बन्धमें लिखा गया है। श्री प्रियादासजीकी भाषा संयत और आकर्षक होनेके साथ ही माधुर्यरसका विशेष रूपसे उद्‌घाटन करनेवाली है। यथा।

'रस कहैं शृंगार रस। ताकौ स्थायीभाव रति है। यह शृङ्गार लालजू कौ स्वरूप है। या स्वरूप कौ स्थायी प्रियाजीके रूपमें है। हित सन्धित है, रति सन्धित नाहीं। यातें नयौ रस है।'

श्री हितरूपलाल गोस्वामी-विरचित सिद्धान्तके दो अन्य गद्य-ग्रन्थ देखनेमें आते हैं। १. सर्वसिद्धान्त-भाषासार और २. सम्प्रदाय-निर्णय। प्रथम ग्रन्थमें प्रेम और भक्ति तथा भाव और रसका वर्णन मिलता है। द्वितीय ग्रन्थमें आचार्य-परम्परा, धाम-निष्ठा, उपासना-पद्धति, द्वारा, गोत्र आदिका विवेचन किया गया है। आचार्य-परम्परा 'श्री नित्यविहारी युगलात्मकके नूपुर-रवसैं शब्द-ब्रह्मकी उत्पत्ति' से प्रारम्भ कर 'तिनमें वंशीरूप श्री हित-हरिवंश गोस्वामी' तक बतलायी है।

वि० सं० १८३७ के लगभग श्री हरिलाल व्यासने 'सेवक-वाणी' की टीका व्रजभाषा गद्यमें की। संस्कृतनिष्ठ शब्दोंका प्रयोग होनेपर भी इसकी भाषा सहज स्वाभाविक रूपमें दिखाई देती है। उद्धरण प्रस्तुत है।

'आप प्रगटैं तब धाम हू, परिकर हू प्रगटैं। तहाँ अचिन्त्य शक्तिकरि अप्रगट-प्रगट दोऊ लीला भई चलीं जांइ, नित्यतामें कछु क्षति नाँहि।'

सं० १८५७ में रतनदासजी-कृत 'सेवक-वाणी' की एक अन्य रचना प्रकाशमें आयी। इस टीकामें आपने सेवकजीके आन्तरिक भावोंको व्यक्त करनेका प्रयास सहज भाषामें किया है। यथा।

'जा जीवने हित सौं हरिकी भक्ति करी ताके बसमें भयो। फिर जा भक्तने जैसो भाव धर्‍यो ताके हेत तैसोई रूप धरि ताको मनोरथ पूरन करत भये।'

चाचा हित वृन्दावनदास-कृत 'स्वप्न-विलास' भी व्रजभाषाका गद्य-ग्रन्थ है। इसका काल-निर्णय नहीं हो सका है। स्वप्नावस्थामें चाचाजीको प्रिया-प्रियतमकी जिन लीलाओंका आभास हुआ, उन्हींको आपने सहज-स्वाभाविक भाषामें व्यक्त कर दिया।' एक उदाहरण प्रस्तुत है :

'चम्पकबरनीको फूलको सिंगार, पीत सारी, लाल लहँगा, सोनेके फूलनकी बूटी, श्याम कंचुकीसौं जमुनाकी पहलकारीपर सोभा देखते हैं।'

सं० १८६१ में गो० चतुरशिरोमणि लालने 'भावना-सागर' नामक एक विशाल गद्य-ग्रन्थकी रचना की जिसमें 'श्री श्यामा-श्यामको विवाह-विनोद' सम्बन्धी वर्णन उपलब्ध होता है। सरल-सीधी और रोचक भाषामें युगल-किशोरके प्रेमरस-रूपयुक्त सखीभावोपासनाकी मार्मिक व्यञ्जना इसका प्रतिपाद्य विषय है। विवाह-समयका एक उदाहरण देखिये :

'रूपके सहदाने वजन लगे, छविकी नौबत झरनि लगी, कटाक्षनकी न्यौछावर होंन लगी, बिहारकी सेना-चतुरंगिनी सजि कैं ठाड़ी होत हितके नगरमें बधाई वजत भयी।'

वि० सं० १९६३ के लगभग स्वामिनीशरणजीका 'श्रीहितानन्द-सागर' नामक गद्य-ग्रन्थ प्रकाशमें आया है। इसमें हित-परिकरका सखीरूपमें अवतरण तथा रास-विलास आदिकी विभिन्न मुद्राओंका वर्णन सरल और प्रवाहमयी भाषामें किया गया है। यथा :

'अब भीतर श्री हित अली जू, श्री सेवक अली और नागरीदासी जू, श्री नरबाहिनी, ध्रुवदासी जू सहित बतरस भईं मोद बढ़ाइ रही हैं।'

उपर्युक्त विवेचनसे निःसन्देह यह कहा जा सकता है कि राधावल्लभ-सम्प्रदायका व्रजभाषा गद्य-साहित्य अपने सूक्ष्म कलेवरमें भी विशाल गरिमा छिपाये हुए है। साथ ही लालित्य और माधुर्यमय रूप-वैशिष्ट्यके कारण श्रोता और पाठकका मन हरण कर लेनेकी अपूर्व क्षमता भी उसमें विद्यमान है।



बिखरे मोती

- संन्यास नोट है तो कर्मयोग है सिक्का। दोनोंकी कीमत एक ही है।
- ज्ञान बिलकुल पुराना उत्तम, उपासना बिलकुल अन्तिम उत्तम।
- भगवान्‌की इच्छासे ही कार्य होते हैं, लेकिन हमारी कृति भगवान्‌की इच्छाके लिए वाहनरूप है।
- सेवाकी कीमत उसके परिमाण पर निर्भर नहीं।

जय बँगला, जय भारत देश !

जय बँगला जय भारत देश !

१.

हिमगिरिसे लेकर पद्माके धान-भरे कूलोंतक,
सिन्ध कराचीसे बंगाल-खाड़ीके मस्तूलोंतक।
हिन्द - महासागरकी छातीपर लेकर 'विक्रान्त',
'शाहजहाँ गाजो' को तुमने किया वीरवर शान्त।
दुर्योधनकी जाँघ तोड़कर बँधे द्रौपदीके केश !

२.

आजादीका खेल कहीं सिक्कोंसे खेला जाता,
यहाँ चन्दबरदाई कलम तोड़कर खड्ग उठाता।
नहीं वीरताका इतिहास लिखा करती है स्याही,
आजादीका सूर्य उगाता जलता हुआ सिपाही।
खून चाटकर ही खिलता है सैनिकका गणवेश !

३.

जिनके दृढ़ संकल्पोंने फाड़ी अन्याय-पताका,
बलिदानी परवानोंने तोड़ी संगीन-शलाका।
मधुपुर और मेघनाके तटपर वीरोंकी टोली,
भरती रही शीश - फूलोंसे वंगभूमिकी झोली।
तभी हुआ साकार 'इन्दिरा' के प्रणका परिवेश !

४.

मुक्तिवाहिनीके प्राण किशोरो तुम्हें बधाई,
अपमानित माँ - बहनोंकी जो तुमने लाज बचाई।
ओ भारतके वीर जवानो तुम्हीं मुक्तिके दाता,
तुम सेनापति कार्तिकेय-से रामचन्द्रसे त्राता।
किया सैन्य-शासन लंकामें जनमतका अभिषेक !

५.

अमर शहीद 'यतीन्द्रनाथ' की फिरसे करो आरती,
जय सोनार बाँगला कवि 'रवीन्द्र' की मधुर भारती।
फिर गूँजे 'मुजीब' के अधरोंपर जन-मनके नारे
हँसे कलश मन्दिरके, मसजिदकी नाचें मीनारें।
तमके खँडहरमें करता है नया प्रभात-प्रवेश !

—डॉ० विष्णुदत्त 'राकेश'

चिलम : एक सत्य कथा

श्री जगदीशचन्द्र मिश्र



भोर-भोरमें स्नान करनेके बाद रधिया जब ताखेपर रखी भगवान् श्रीकृष्णकी मूर्तिको धूप-दीप अर्पित करने गयी तो उसके होश ही उड़ गये। उसका दिल जोर-जोरसे धड़कने लगा और हाथसे थाल छूटकर जमीन पर गिर गया। बगलमें ही चारपाईपर सोये उसके पतिकी नींद टूट गयी। करवट बदले हुए उसने देखा तो रधिया चकित-सी खड़ी थी।

उसका पति विनोद घरसे १४ मील दूर एक फैक्टरीमें काम करता है। सवेरे ७॥ बजे वह साइकिलपर सवार हो निकल जाता है, तो १० बजे रातके पहले नहीं लौट पाता। खाते-पीते १२ बज जाते हैं और इसके बाद ही सो पाता है। इसीलिए रधिया भोरमें ही उठकर नहाती-धोती है, भगवान्की पूजा करती और जल्दी-जल्दी चूल्हा जलाकर भोजन तैयार करनेमें लग जाती है। इस बीच विनोद अगर नहीं उठा तो ६॥ बजे तक वह उसे जगा देती है।

आज विनोदके जगनेमें अभी डेढ़ घण्टे बाकी थे, इसलिए रधिया उसे जगाना नहीं चाहती थी। किन्तु विनोदकी आँख स्वयं खुल चुकी थी। उसने आँख मलते हुए पूछा : 'क्या है ?'

'है क्या, अपनी आँखों क्यों नहीं देखते। इस घरमें भगवान्का भी कोई सम्मान नहीं। मैंने पहले ही कहा था इस मूर्तिको गंगाजीमें प्रवाहित कर दो। भगवान्की शोभा मन्दिरमें ही है। इस अकेली कोठरीमें…… !'

विनोद उठकर बैठ चुका था, किन्तु रधियाकी बातें उसकी समझमें नहीं आ रही थीं। उसने संयत स्वरमें कहा : 'मेरी समझमें नहीं आता कि किस बातपर बिगड़ रही हो ?'

'काहे समझोगे ! देखते नहीं, भगवान्की मूर्तिके पास सटाकर किसीने जली चीलम रख दी है !'

'तो इसमें क्या हो गया, उसे उठाकर फेंक दो !'

'आप भी खूब कहते हैं ! जिस घरमें भगवान्का इतना अपमान हो, उस घर ·· !'

'···उस घरका कुछ नहीं बिगड़ेगा। क्योंकि यह गलती हमने जान-बूझकर नहीं की है। यह नादानी राजूकी है जो अभी नादान बच्चा है।'

'आपके कहनेसे नादान है, वह सब जानता है। आज मैं साफ-साफ कह देती हूँ कि इस मूर्तिको गंगाजीमें प्रवाहित कर दो। भगवान् अगर देगा तो उनके लिए अलग मन्दिर बनवा दिया जायगा।'

'तुम्हारी राय समझमें नहीं आयी। क्या उस मूर्तिको फेंककर हम इस घरको भगवान्से खाली कर देंगे? जिस भगवान्को तुम पूजा करती हो वह इस मूर्तिमें है, मुझमें और तुझमें भी है। उसे हटाकर हम एक क्षण भी नहीं जी सकते!'

'मैं कब कहती हूँ कि भगवान् कहाँ नहीं है; किन्तु यदि यह सही है तो इस मूर्तिके लिए इतना झमेला क्यों? अपने भीतरके भगवान्को ही हम पूज लिया करेंगे!'

'तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है, किन्तु हम सांसारिक प्राणी इतनी कठिन उपासना नहीं कर सकते। यह तो कई महान् साधक ही कर सकता है। सांसारिक प्राणी अपनी जीविका और जीवनके पीछे इतना पागल रहता है कि उसे अपने भीतर भगवान्को देखनेका अवसर ही नहीं मिलता। अगर हर आदमीको इतना ज्ञान हो जाय तो ये चोरियाँ, हत्याएँ, झगड़े तथा नाना प्रकारकी अनैतिक क्रियाएँ कभी न हों।'

विनोदके भीतरका दर्शन जग गया था। बहुत दिनों बाद वह भोर-भोरमें उठा था। भोरकी शीतल हवामें विभोर था। उसने रधियासे एक महात्मा द्वारा सुनी एक घटनाकी चर्चा करते हुए बताया कि "एक चोर प्रतिदिन रातमें चोरी करने जाते समय मन्दिरके सामने जाकर घण्टों प्रार्थना करता और विनम्रतापूर्वक याचना करता कि उसे भारी माल प्राप्त हो। बहुधा उसे थोड़ा-बहुत सामान रोज ही मिल जाता। चोरीके इस मालसे वह मन्दिरमें मिठाइयाँ और अन्य सामान भी समय-समयपर चढ़ाया करता।

उसका यह क्रम काफी दिनोंतक चलता रहा। लेकिन चोरी तो चोरी ही थी, एक दिन वह रंगे हाथ पकड़ लिया गया। सिपाहियोंके साथ जब वह मन्दिरके पास पहुँचा तो कुछ क्षण दर्शन करनेकी मोहलत माँगी और भगवान्को मूर्तिके सामने जाकर रोने लगा। मूर्तिसे आवाज आयी। 'मैं अपराधके लिए वरदान नहीं दे सकता। तुमने चोरी की है, अतः इसका फल भोगना ही पड़ेगा।'

'लाचार होकर उस चोरको जेल जाना पड़ा।'

रधिया आवेशमें थी, अतः इस कहानीका उसपर कोई असर नहीं हुआ। उसने छूटते ही कहा : 'तो क्या भगवान् इस अपराधकी सजा नहीं देगा?'

इसके बारेमें मैंने पहले ही बता दिया है। नादान बच्चोंकी नादानीपर भगवान् नाराज नहीं होते, बल्कि वे स्वयं आनन्दित होते हैं। तुम्हें नारद भगवान्की वह कथा मालूम है, जब कि नारदजीने विश्वमोहिनीसे अपमानित होनेके बाद भगवान्से बिगड़कर कहा : 'तुमने हमें बन्दरका चेहरा क्यों दे दिया?' जानती हो भगवान् क्या बोले? भगवान्ने समझाते हुए कहा :

'नारद, तुम ज्ञानी ही नहीं, महाज्ञानी और विज्ञानी हो, अतः तुम्हारी इस भूलका दण्ड जरूरी था।' इतना सुनते ही नारद पानी-पानी हो गये।

'इसका मतलब ?'—रघियाने झुंझला कर पूछा।

वही तो बता रहा हूँ। भगवान्‌ने नारदको समझाया कि यदि कोई अवोध बच्चा आगकी ओर दौड़ता है तो घरके लोग उसे पकड़ लेते हैं। किन्तु वही लड़का जब समझदार हो जाता है तो उसे कोई नहीं रोकता। पहले तो वह आगके पास स्वयं ही नहीं जाता, किन्तु यदि चला भी जाय तो कोई उसे रोकेगा नहीं।'

रघियाको विनोदके उपदेश अच्छे नहीं लग रहे थे। उसने झुंझलाते हुए कहा : 'यह सब ठीक है, लेकिन यह नादानो अच्छी नहीं। भगवान् भगवान् ही हैं, उनका अनादर हम अपने सामने नहीं होने देंगे।'

'अनादर कहाँ हो रहा है देवी जी ! आप नहा-धोकर पूजा तो करती हैं ?'

'मुझे मजाक अच्छा नहीं लगता !'

'मैं मजाक नहीं कर रहा हूँ। भगवान्‌का यही सही सम्मान है। वह हमें जितनेमें रखेगा, हमारा कर्तव्य है कि हम उसीमें उसे भी रखें। यह बात सही है कि भगवान् सब जगह है, किन्तु जबतक हम मोह-मायामय संसारमें हैं, हमें प्रतीकके रूपमें भगवान्‌की स्थापना करनी होगी। उसके आधारपर हम अपने भीतरके भगवान्‌को समझ सकते हैं।'

दंपतीमें इसी तरह देरतक बातें होनेके कारण दूसरी चारपाई पर सोये राजूकी भी नींद खुल गयी। बाहर प्रकाश फूट चुका था। वह आश्चर्यसे माँ-बापकी ओर देखने लगा। वह अक्सर सवेरे उठ जाता है, आज वह देरसे उठा था, किन्तु अभीतक माँने चूल्हा नहीं जलाया और न विनोद ही फैक्टरी जानेकी तैयारीमें था।

राजूने खयाल किया, आज रविवार या छुट्टीका दिन भी नहीं था। वह कुछ पूछनेवाला ही था कि माँ बिगड़कर बोली : 'तू कबसे जग रहा है ?'

'अभी जगा हूँ !'

'हूँ ! भगवान्‌की मूर्तिके पास जली चिलम तुमने रखी है ?'

'क्यों ? उसे छूना मत। मैंने इसीलिए मूर्तिके पास रख दिया है।'

'तुम्हें कहाँसे मिली ?'

'वह नागाबाबाकी चिलम है। हमारे स्कूलके पीछे वे इसमें आग रखकर धुँआ निकाल रहे थे। मैंने पूछा तो उन्होंने बताया कि यह मेरी दवा है। बिना इसके मेरा जीना मुश्किल है। दवा पीनेके बाद भी उनकी आँखें लाल थीं। उन्होंने इसे मुझे सौंपते हुए कहा कि इसे जतनसे रखना, कल सवेरे लूँगा !'

राजूके इस उत्तरसे विनोदको बेहद खुशी हुई। पहले जब वह रघियाको समझा रहा था, तो उसके मनमें नाना प्रकारकी शंकाएँ उठ रही थीं। उसे यह भी भय था कि वह तथा

उसके बाप-दादाने जो नहीं किया, उसे बच्चे कर डालेंगे ! किन्तु राजूकी बातोंने उसकी आशंकाओंको निर्मूल कर दिया।

वह राजूसे कुछ और सवाल पूछनेवाला ही था कि नागाबाबा दरवाजेपर आकर आवाज देने लगे। राजू उनकी आवाज पहचान गया। उसने विनोदसे बाबाके आनेके सूचना दे दी। विनोद राजूसहित उठकर बाहर आया। विनोदने अपने हाथों चिलम ले जाकर उन्हें दे दी और निवेदन किया कि 'बच्चोंको ऐसा कार्य न सौंपा करें।' उन्होंने बाबासे बताया कि एक रातमें चिलमने उसके घरमें कितना बड़ा काण्ड कर दिया।

बाबाको सारी स्थिति समझते देर न लगी। उन्होंने चिलम वहीं पटककर चूर-चर कर डाली और प्रतिज्ञा की कि अब कभी भी इसके चक्करमें न पड़ेंगे।

विनोद, रधिया और राजूने बाबाको सम्मानसहित विदा किया। देर अधिक हो गयी थी, अतः सब अपने-अपने जरूरी काममें लग गये। रधिया अब जहाँ रहती है, जो कुछ भी करती रहती है, भगवान् श्रीकृष्णकी मूर्ति उसके मनमें समायी रहती है। अपने कृष्णको अब वह कहीं नहीं जाने देगी।

सत्यकी जय शक्तिकी जय !

क्रान्तिके स्वर गूँजते हैं, हिन्दकी जय, वंगकी जय,
भुट्टो याहिया भी सुनते हैं, सत्यकी जय, शक्तिकी जय !
लोकतन्त्र औ' स्वतन्त्रताके जानी दुश्मन भुट्टो टिक्का,
याहिया जैसे फौजी जनरल, बैठ गया इन्द्राका सिक्का !
सैबर - मिरज दुम दबा रहे, इंटर नैटोंका जयघोष,
पापी पाकी काँप उठे हैं, हिन्द - वंगका ऐसा रोष !
पी टी पैटन टैंक पिटे, भारतके वीर जवानोंसे,
जलसमाधि लेती पनडुब्बी, उनके प्रखर निशानोंसे !
ढाकापर रहमान - पताका, फर - फर - फर फहराई,
पिण्डोकी छातीपर छायी, शूरोंकी तरुणाई !
दूर देशतक धाक जमी सेनाके शेर जवानोंकी,
कब्र खुद गयी जंगखोर याहिया जैसे हैवानोंकी !
आज सारा विश्व देखें, सत्यकी जय, शक्तिकी जय,
क्रान्तिके स्वर गूँजते हैं, हिन्दकी जय, वंगकी जय !

—श्री यतीन्द्र भटनागर

वैदिक वीर सैनिक

श्री विजयकुमार

★

वेदने वीर सैनिकोंको अपने लक्ष्यकी ओर बढ़नेकी प्रेरणा देते हुए कहा है कि तू ऐसा प्रयत्न कर, जिससे जगत्में आर्य-राज्य हो, दस्युका राज्य न हो। कभी तू आततायी राक्षसके अत्याचार सहन न कर। उद् बृह रक्षः सह मूलमिन्द्र। —हे वीर! राक्षसोंको जड़मूल उखाड़ फेंक। हालका भारत-पाक-युद्ध भी सुर-संस्कृति या आर्य-संस्कृति और दस्यु-संस्कृति या आसुर संस्कृति, दो विरोधी विचार-धाराओंका ही युद्ध रहा। इसके लिए वेदने अनादिकालसे कई महत्वके आदेश दे रखे है। कुछ नमूने देखिये।

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो अराव्णः।

अर्थात् क्रियाशील बनो, प्रभु-महिमाका प्रचार करो, विश्वको आर्य बनाओ और राक्षसोंका संहार करो।

अब आइये, अपने वैदिक वीर सैनिकोंकी गर्जना, ओज और मन्युसे अपनेको अनुप्राणित कर शत्रुओंको मार भगायें। देखिये, वेद सैनिकोंको उत्साहित कर रहा है:

विरक्षो वि मृधो जहि, वि वृत्रस्य हनू रुज।
वि मन्युमिन्द्र वृत्रहन्नमित्रस्याभिदासतः॥

हे वीर! राक्षसोंका संहार कर; हिंसकोंको कुचल डाल; दुष्ट शत्रुकी दाढ़ें तोड़ दे। जो तुझे दास बनाना चाहे, उस वैरीके क्रोधको चूर-चूर कर दे। इस दृढ़ विश्वासपर कि न त्वे आर्यस्य दासभावः (चाणक्य) आर्य किसीका कभी दास नहीं बना है,

उत्तिष्ठत संनह्यध्वमुदाराः केतुभिः सह।
सर्पा इतरजना रक्षांस्यमित्राननु धावत॥

उठो वीरो! कमर कस लो, झण्डे हाथमें पकड़ लो! जो भुजंग (आस्तीनके साँप) हैं, लम्पट हैं, पराये हैं, राक्षस हैं, वैरी हैं, उनपर धावा बोल दो।

वेदके इन्हीं ललकारभरे वचनोंको सुन वैदिक वीर गरजता हुआ कह रहा है।

यदि वो गां हंसि यद्यश्वं यदि पूरुषम्।
तं त्वा सीसेन विद्ध्यामो यथा नोऽसौ अवीरहा॥

ओ आततायी दुश्मन ! तू मुझे निस्तेज, बुझा हुआ मत समझ । मत समझ कि आकर मुझे सता लेगा और मैं चुपचाप खड़ा देखता रहूँगा । देख, यदि तू मेरी गायको मारेगा, घोड़ेको मारेगा, मेरे राष्ट्रवासियोंको मारेगा तो याद रख, मैं तुझे सीसेकी गोलीसे वेधकर मौतके मुँह ढकेल दूँगा ।

यथा सूर्यो नक्षत्राणामुद्यंस्तेजांस्याददे ।
एवा स्त्रीणां च पुंसां च द्विषतां वर्च आददे ॥

अरे, क्या तूने मुझे साधारण मनुष्य समझ रखा है ? मैं तो सूर्य हूँ सूर्य ! जैसे सूर्य उदित होकर सब नक्षत्रोंके तेजको हर लेता है, वैसे ही मैं अपूर्व आभाके साथ जगत्में उदित होकर शत्रुता करनेवाले सभी स्त्री-पुरुषोंका तेज हर लूँगा ।

हमारा वीर सैनिक अकेला ही हजारोंसे निपट सकता है । देखिये, उसकी वीर-भावना :

अभीदमेकमेको अस्मि निष्षाडमी द्वा किमु त्रयः करन्ति ।
खलेन पर्षान् प्रतिहन्मि भूरि किं मा निन्दन्ति शत्रवोऽनिन्द्राः ॥

अरे ! मैं अकेला ही रिपुदलके छक्के छुड़ा दूँगा । यदि दो मिलकर आयें, तो उनके लिए भी अकेला ही काफी हूँ । दोके स्थानपर तीन आ जायें, तो वे भी मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते । शत्रुओंको मैं वैसे पीस डालूँगा, जैसे खलिहान में पूलोंको । ये निर्वीर्य शत्रु मेरी क्या निन्दा कर रहे हैं ?

इन उत्साही पराक्रमी वीर सैनिकोंके साथ मुठभेड़ होनेपर देखिये, शत्रु-पिशाचोंकी कैसी दुर्गति होती है ।

तपनो अस्मि पिशाचानां व्याघ्रो गोमतामिव ।
श्वानः सिंहमिव दृष्ट्वा तेन विन्दते न्यञ्चनम् ॥

दुष्ट पिशाचोंके बीच मैं खलबली मचा देनेवाला हूँ, जैसे बाघ आकर ग्वालोंके बीच । मुझे सामने देखकर पिशाच अपनी सब चौकड़ी भूल जाते हैं, जैसे शेरको देखकर कुत्ते ।

और जरा इन वैदिक वीर सैनिकोंकी गरिमा भी तो देखिये :

न पर्वता न नद्यो वरन्त वो यत्राचिध्वं मरुतो गच्छथेदु तत् ।
उत द्यावापृथिवी याथना परि शुभं यातामनुरथा अवृत्सत ॥

हे वीर पुरुषो ! न नदियाँ और न पर्वत ही तुम्हें रोक सकते हैं । तुम जहाँ जाना चाहते हो, वहाँ पहुँच ही जाते हो । और तो और ! तुम सम्पूर्ण द्युलोक तथा पृथिवी-लोककी भी परिक्रमा कर आते हो ।

सेनानायकोंकी भी महत्ता देखिये :

धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वसूनि वो वना जिहते यामनो भिया ।
कोपयथ पृथिवीं पृश्निमातरः शुभे यदुग्राः पृषतीरयुग्ध्वम् ॥

हे पृथिवीपुत्रो ! वीरजनो ! जब तुम उग्ररूप धारण किये हुए अपनी सेनाओंको सुन्दर कार्यमें लगा देते हो, तो अपने भक्तको (देशवासियोंको) द्युलोक तथा पर्वतोंसे धन लाकर प्रदान करते हो। तुम्हारी तीव्रगतिके भयसे तो शत्रुदल भी थर-थर कांपने लगते हैं और तुम समस्त भूमण्डलको शिथिल कर देते हो।

इससे कोई यह न समझे कि वैदिक वीर सैनिक महज किसी क्षणिक जोशमें आकर अपने बल-पराक्रमका प्रदर्शन करता फिर रहा है। प्रत्युत वह तो सत्य और न्यायकी रक्षाके लिए लड़ रहा है और उसे अपनी शाश्वत विजय तथा अभ्युदयका दृढ़ निश्चय एवं विश्वास है। देखिये, वह कितने आत्मविश्वासके साथ विजय-दुन्दुभि बजा रहा है।

जितमस्माकमुद्भिन्नमस्माकमभ्यष्ठां विश्वाः पृतना अरातीः।
इदमहमामुष्यायणस्याऽमुष्याः पुत्रस्य वर्चस्तेजः
प्रणमायुर्निवेष्टयामि। इदमेनमधराञ्च पातयामि॥

निश्चय ही हमारी विजय होगी, हमारा अभ्युदय होगा, शत्रुकी सेनाको हम परास्त कर देंगे। मुझसे शत्रुता ठाननेवाला जो अमुक-अमुक मांका लाल है, उसके वर्चस्, तेज, प्राण और आयुको मैं हर लूंगा। उस दुष्ट शत्रुको जमीनपर दे मारूंगा।

वेद चुपचाप पराजय, अत्याचार, अन्यायको सह लेनेकी शिक्षा नहीं देते, अपितु दुश्मन और अत्याचारीका सिर सदाके लिए कुचल डालनेकी हिम्मत बंधाते हैं। अन्याय और अत्याचारको नष्ट करनेके लिए यदि हिंसा भी करनी पड़े, तो वह हिंसा नहीं, अपितु वीरव्रत है। यदि कोई दुष्ट अत्याचारी हमपर अत्याचार करने आता है, तो हमारा यह परम कर्तव्य है कि वीरताके साथ उसका मुकाबला करें, कायर एवं भीरु न बनें।

ये भावनाएं केवल पुरुषोंमें ही नहीं, आर्यनारी भी शत्रुओंको चेतावनी देती कहती है।

अवीरामिव मामयं शरारुरभिमन्यते।
उताहमस्मि वीरणीन्द्रपत्नी मरुत्सखा विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः॥

अरे घातकी! क्या मुझे अबला समझ बैठा है? मैं अबला नहीं, वीराङ्गना हूं। वीरकी पत्नी हूं। मौतसे न डरनेवाले वीर मेरे सखा हैं। मेरे पति संसारमें अपनी सानी नहीं रखते।

नारीको अपने परिवारके सदस्योंकी तेजस्विता और वीरतापर भी गर्व है। देखिये।

मम पुत्राः शत्रुहणोऽथो मे दुहिता विराट्।
उताहमस्मि सञ्जया पत्यौ मे श्लोक उत्तमः॥

मेरे पुत्र शत्रुके छक्के छुड़ानेवाले हैं, मेरी पुत्री अद्वितीय तेजस्विनी है। मेरे पतिकी उत्तम कीर्ति है। और मैं अपनी क्या बताऊं? कोई मेरी ओर आंख उठाकर देखे तो सही, ऐसा परास्त होकर लौटेगा कि छट्ठीका दूध याद आ जायगा!

वैदिक वीरोंकी वीरताके अन्य भी गीत सुनिये, जिनमें शत्रुको सदाके लिए जड़-मूल उखाड़ फेंकनेकी सङ्कल्प-शक्ति प्रकट हो रही है:

पृथिव्यास्तं निर्भजामो योऽस्मान् द्वेष्टि।

पृथिवी परसे उसे उखाड़ फेंकेंगे, जो हमसे शत्रुता मोल लेता है। फिर पृथ्वीसे भागकर यदि वह अन्तरिक्षमें चला जाय तो।

अन्तरिक्षात् ते निर्भजामो योऽस्मान् द्वेष्टि।

अन्तरिक्षसे भी उसे उखाड़ फेंकेंगे, जो हमसे शत्रुता करेगा। अन्तरिक्षसे जान बचाकर यदि द्युलोकमें चला जाय तो:

दिवस्तं निर्भजामो योऽस्मान् द्वेष्टि।

द्युलोकसे भी उसे निकाल बाहर कर देंगे, जो हमसे शत्रुता करेगा। और यदि द्युलोकसे भी भागकर वह दिशाओंकी शरण ले तो।

दिग्भ्यस्तं निर्भजामो योऽस्मान् द्वेष्टि।

दिशाओंसे भी उसे निकाल कर छोड़ेंगे, जो हमसे शत्रुता करेगा। सारांश, हम शत्रुओंको कहींका न रहने देंगे। उनका दुनियासे नामोनिशान मिटाकर छोड़ेंगे, जिससे फिर वे पनप ही न पायें।

लेकिन कहीं वह हमें धोखा देनेके लिए समझौता करने आये, तो वेद दृढ़ताके साथ चेतावनी देता है।

न पिशाचैः सं शक्नोमि न स्तेनैर्न वनर्गुभिः।

मैं शत्रु-पिशाचोंके साथ, चोर-लुटेरोंके साथ, डाकुओंके साथ कभी भी समझौता नहीं कर सकता। वैदिक वीरोंके ये सन्देश हममें अदम्य वीरभाव भरें और हम पूरी सामर्थ्यसे शत्रुसे सदा मुकाबिला करते हुए खदेड़कर देशमें सुख-शान्तिका साम्राज्य सुरक्षित रख सकें। इस उद्देश्यमें यह प्रयत्न कुछ काम आये, तो लेखक अपनी लेखनी सार्थक समझेगा।



- विचारोंका 'ब्राड्कास्ट' नहीं, 'डीपकास्ट' ही ठीक है।
- 'स्वावलम्बन'के तीन अर्थ हैं: १. रोजी-रोटीमें आत्म-निर्भरता, २. स्वतन्त्र शिक्षण और ३. स्वानुशासन।
- जीवनमें भय रखनेसे ही मरण निर्भय होगा।
- सत्यकी परिभाषा नहीं, कारण परिभाषाका आधार ही सत्य है।



भारतीयोंका प्यारा खाद्यान्न : खिचड़ी

श्री नारायण दत्तात्रेय कालेकर



[उत्तर भारतमें मकरसंक्रान्तिके त्योहारको 'खिचड़ीका त्योहार' कहा जाता है। वर्षके विभिन्न त्यौहारोंके बीच इस त्यौहारमें लोगोंका उत्साह देखते ही बनता है। खिचड़ी आजके युगकी पुकार है। हमारा भारतीय संविधान लिङ्ग, जाति, धर्म-निरपेक्ष सब लोगोंकी खिचड़ी-संस्कृतिका ही मूलमन्त्र हमें देता है। यही मन्त्र मानकर पूर्व बङ्गाल 'बाँगला देश' बन गया और पाकिस्तान इसीसे नफरत कर नामशेष होनेकी स्थितिमें है। यह खिचड़ी आजके जमानेमें ही इतनी मान्य नहीं हुई है। वेदकालसे इसका बहुमुखी माहात्म्य अखण्ड चमकता आ रहा है। भले ही वह धर्म और मानवोंकी खिचड़ी न हो, अन्नोंकी तो खिचड़ी बनती ही थी, जो प्राणीके प्राणाधार होते हैं। विश्वास न हो तो शोधप्रेमी विद्वान्‌का प्रस्तुत लेख पढ़ें।—सम्पादक]

किन्हीं एकसे अधिक पदार्थोंके मिश्रणको 'खिचड़ी' कहा जाता है। 'खिचड़ी' शब्दका मूलस्वरूप 'कृशरा' है। वैदिक-साहित्यमें इसका अनेक स्थानोंपर उल्लेख है। आयुर्वेदमें तो खिचड़ी 'कृशरा' नामसे ही प्रसिद्ध है।

खिचड़ीका नाम लेते ही चावलमें मूँगकी दाल मिलाकर बनाये गये पदार्थकी कल्पनासे मुँहमें पानी भर आता है। आपको जानकर आश्चर्य होगा कि यह पदार्थ इतना व्यापक है कि भारतके स्वर्णकाल मुगल-सम्राट् शाहजहाँके समयमें भी गरीबसे लेकर बादशाहतक सभी समान रूपसे इसका सेवन किया करते थे।

प्राचीन कालसे ही हमारे यहाँ यज्ञ, दान, श्राद्ध, बलि आदि कर्मोंमें कृशरा अत्यन्त उपयोगी मानी गयी है। यहाँ कृशराके उपयोग, बनानेकी विधियाँ तथा उसके सेवनसे होनेवाले सुपरिणामोंका संक्षिप्त विवेचन किया जा रहा है।

'कृशरा'का दूसरा नाम है 'यवागु'। यह शब्द भी वैदिक-साहित्यमें अनेक स्थलोंपर दीखता है। नामसे तो लगता है कि यह 'यव' (जौ) पदार्थसे बनता होगा। किन्तु प्राचीन साहित्यके आलोडनसे स्पष्ट है कि जौसे बनी (यवसृष्टकः) वस्तु जिस प्रकार 'यवागू' कहलाती थी, उसी प्रकार चावलका कई वस्तुओंके मिश्रण से बना पदार्थ भी 'यवागू' कहलाता था। इस प्रकार 'यवागू' तथा 'कृशरा' दोनोंका पर्यायवाची शब्दोंके रूपमें

उपयोग हुआ है। सूत्र-साहित्यमें स्पष्ट उल्लेख है कि व्रीहि या जौके अभावमें यवागूसे हवन करना चाहिए।

साधारणतया खिचड़ीके दो प्रकार देखनेमें आते हैं : १. पथ्योपयोगी, सादी और २. मसालेदार। किन्तु एक तीसरा प्रकार भी है जो यज्ञ, दान तथा बलि-कर्मोंके लिए बनाया जाता है।

हवनमें खिचड़ी

हवनोपयोगी द्रव्योंमें तिल, तन्दुल, मूंग, घृत, यव और उरदी आदि पदार्थोंका विशेष उपयोग किया जाता है। उपर्युक्त पदार्थोंमें से अधिकतर पदार्थ 'कृशरा' में हुआ करते हैं। 'शतपथ-ब्राह्मण'में लिखा है कि रात्रिके समय होम करना हो तो उसमें यवागूका उपयोग किया जाय। 'स्मृतिकौस्तुभ'के मतानुसार माघमासके महीनेभर प्रतिदिन अग्निनारायणको चावलके साथ तिलकी भी आहुति देनी चाहिए।

हमारे यहाँ जब वैदिक-पद्धतिके अनुसार ग्रहशान्ति, गृहप्रवेश, व्रतबन्ध, विवाह आदि होते हैं तो उनमें बलि दिये जाते हैं। इसमें ओदन (भात) तिल, घृत और उरदी यह कृशरान्न प्रमुख रूपसे काममें लाया जाता है। 'काठक गृह्यसूत्र'में देवताओंको बलि प्रदान करनेका उल्लेख है। ये बलि अन्नके हुआ करते हैं तथा इनमें चावल, तिल्ली और उरदीका प्राधान्य होता है।

श्राद्धमें खिचड़ी

मानव-सृष्टिके निर्माता महाराज मनुने पितृकर्म श्राद्धादिमें तिल और यवको श्रेष्ठ माना है। यदि किसी कारण यव प्राप्त न हो सके तो उसके अभावमें चावलसे ही श्राद्धकार्य सम्पन्न किया जा सकता है। पिण्ड-प्रदानमें भात, तिल, यव तथा उरदीको महीन पीसकर बनाया 'वड़ा' मिलानेकी भी प्रथा है।

व्रतमें कृशरा या खिचड़ी

महाराष्ट्रियोंमें विवाहके उपरान्त नववधुको पहले पाँच वर्ष श्रावणके महीनेमें भगवान् शंकरकी आराधना करनी पड़ती है, जिसमें क्रमशः चावल, मूंग, तिल्ली तथा जौ लिया जाता है।

'व्रतार्क' और 'व्रतचन्द्रिका'में लिखा है कि माघके महीनेमें मकरसंक्रान्तिके दिन तिल और तन्दुल द्वारा आशुतोष भगवान् शंकरका पूजन करें तथा रात्रिमें शिवालयमें तिल्लीके तेलके दीपक जलायें।

दानमें खिचड़ी

माघमासमें खिचड़ीका दान करनेकी बात स्मृति-कौस्तुभ'में मिलती है। उसके मतानुसार गृहस्थोंको चाहिए कि चावल और मूंगकी दालका मिश्रण दान करे अथवा 'सघृतं कृशरं ब्राह्मणान् भोजयित्वा' अर्थात् घृतपाचित खिचड़ी ब्राह्मणको पेटभर खिलायें। इस

अवसरपर तिल्लीमें गुड़ मिलाकर बनाये हुए लड्डू भी देनेकी प्रथा है। अनुमान है कि इसीलिए लोक-भाषामें इस त्यौहारका नाम 'खिचड़ी' पड़ा हो।

ब्राह्मण-धर्मके अनुसार कृशरान्न अत्यन्त पवित्र तथा दान देने योग्य माना गया है। बौद्धग्रन्थ भी इसकी पुष्टि करते हैं। 'विनय-पिटक' में कथा है कि एकबार भगवान् बुद्ध अपने शिष्योंके साथ चारिकाके लिए जा रहे थे। एक निर्धन ब्राह्मण इस भिक्षु-संघके पीछे इस उद्देश्यसे जा रहा था कि मैं संघको भोजन कराऊँगा। एक दिन समय पाकर उसने अपना विचार भगवान्को बतलाया तथा उनसे खिचड़ी (यवागू) और मूँगके लड्डू (मधुगोलक) भगदल स्वीकार करनेकी प्रार्थना की। इस दानसे प्रसन्न हो भगवान् बुद्धने उसे अनेक आशीर्वाद भी दिये। दानकी यह परम्परा आगे भी चलती रही।

बालाजी बाजीराव उर्फ नानासाहेब पेशवाकी ओरसे प्रतिवर्ष श्रावण शुक्ल प्रतिपद्से पञ्चमीतक पाँच दिन पूनामें 'पर्वती' नामक स्थानपर गरीबोंको दाल-चावलसे बनी खिचड़ी बाँटी जाती थी। अन्तिम षष्ठीके दिन श्रीमन्त पेशवा स्वयं खिचड़ी बाँटने निकलते। इस खिचड़ीमें दाल-चावलके स्थानपर रुपये, मोहर तथा पुतलियाँ मिलाकर बाँटी जाती थीं और वे ऊँटोंपर लदवाकर पर्वती ले जायी जाती थीं।

दैनंदिन उपयोगमें खिचड़ी

खिचड़ीका आज सर्वत्र उपयोग होता है। किन्तु प्राचीन कालमें यह साधारण भोजनमें प्रयुक्त होती थी या नहीं, इसका विवेचन कम आकर्षक नहीं। पाकशास्त्रसे सम्बद्ध ग्रन्थ आज बहुत कम उपलब्ध हैं। तथापि इधर-उधर बिखरे उल्लेख हमारी सहायता करते हैं। बौद्ध-कालका उल्लेख हम ऊपर कर चुके हैं। 'नलपाक-दर्पण' नामक एक प्राचीन ग्रन्थ सामिष खिचड़ीका विधान बतलाता है। उसके मतानुसार खोलते हुए पानीमें मूँगकी दाल धोकर छोड़ दें। उसके किञ्चित् नरम होनेपर स्वच्छ किये शालिनामक चावलोंको छोड़ कलछुलसे चला दें। इतना कर चुकनेके उपरान्त पहलेसे ही भूनकर तैयार किया हुआ मुर्गेके मांसका बारीक खीमा उक्त पात्रमें छोड़ दें। ग्रन्थकारके मतानुसार इसे 'तहरी' कहते हैं। यह वायु-हारक तथा कफजनित दोषनाशक है। इसका सेवन अग्निमांद्य तथा Anaemia जैसे घातक रोगोंमें अत्यन्त हितकर बतलाया है।

१२वीं शताब्दितक पहुँचते-पहुँचते यवागूके अर्थमें आमूलचूल परिवर्तन हो गया। चालुक्य-वंशीय राजा सोमेश्वरने अपने 'मानसोल्लास' नामक ग्रन्थमें यवागूके नामसे एक ऐसे पदार्थका उल्लेख किया है, जिसे केवल 'भात' ही कहना उचित होगा, क्योंकि उसमें मूँग या उरद अथवा तिल्लीका नामतक नहीं है। सम्भव है, दक्षिण भारतमें उक्त प्रकारका प्रचलन रहा हो; क्योंकि उत्तर भारतमें खिचड़ीका स्वरूप ज्यों-का-त्यों ही चला आ रहा है। फ्रांसीसी यात्री बर्नियरने अपनी मुगल-कालीन भारत-यात्राका वर्णन करते हुए खिचड़ीका उल्लेख किया है। उस समय खिचड़ी मूँग, चावल और उरदसे बनती थी और घीके साथ खायी जाती थी। गुजरात और महाराष्ट्रमें आज जो मसालेदार खिचड़ी बनायी जाती है, उसमें चावल और

मूँगकी दाल होती है, जिसे घीकी छौंक देते हैं। रुचिके लिए लोग, बड़ी लायची, जीरा, हींग आदिसे बनाया कच्चा मसाला डालते हैं तथा स्वादके लिए परोसते समय गरीके टुकड़े भी छोड़ देते हैं।

आयुर्वेदके मतानुसार खिचड़ी

आयुर्वेद-शास्त्रमें खिचड़ीके दो प्रकार मिलते हैं : एक सादी तथा दूसरी औषधियुक्त। सादी खिचड़ी बनानेका प्रकार यों है : जितना अन्न हो उससे दूना जल पात्रमें डालकर चूल्हे-पर चढ़ा दें। जब वह घना हो जाय, तब उतारकर सेवन करें। इसके सेवनसे तृष्णा यानी प्यास और बस्तीके सभी रोग दूर होते हैं। एकबार भगवान् बुद्धके पेटमें वायुसे पीड़ा हो रही थी। उस समय उन्हें 'त्रिकटु यवागु' दी गयी थी। त्रिकटुसे सामान्यतया सोंठ, मिरिच, पीपलका बोध होता है, किन्तु बुद्धके वचनानुसार त्रिकटु यवागूमें चावल, तिल और मूँग पड़ा था। इसके सेवनसे उन्हें आराम हुआ। बुद्धने इसे 'भेसज्ज' (दवा) कहा है। इसके गुणोंका वर्णन करते हुए उन्होंने कहा है कि 'इस प्रकार बनी यवागू क्षुधा, पिपासा और वायुको दूरकर पेटका शोधन करती तथा खाये हुए को पचाती है।'

रोगानुसार औषधियुक्त कषायों द्वारा पकायी खिचड़ीके अनेक प्रकार आयुर्वेदमें मिलते हैं, उन सबका विवेचन तो यहाँ सम्भव नहीं। अतएव केवल दो रोगोंपर अत्यन्त लाभप्रद यवागूका यहाँ उल्लेख किया जा रहा है।

शोथरोगपर खिचड़ी

चावलको भलीभाँति साफ कर लें और मूँगकी दालको दो-तीन पानीमें धोकर अलग रखें। तत्पश्चात् जीरा, कचूर, जीवन्ती, अजमोद, पोहकर-मूल, चित्रक, बेलकी गुद्दी और आमसोल आदि दवाओंको ६-६ मासे लेकर काढ़ा बना लें। इसके बाद धोकर रखा हुआ चावल और दाल उसमें छोड़ ऊपरसे हींगकी छौंक देकर काष्ठके करछुलसे चलायें। दो मासे जवाखार डालकर ढक्कनसे ढँक दें। इस प्रकार सिद्ध की हुई यवागू अतिसार, हृद्रोग, शोथ, सभी प्रकारकी बवासीर, प्रमेह तथा अग्निमांद्य आदि रोगोंको नाश करती है।

अधोगत रक्तपित्तपर खिचड़ी

हम एक सामिष खिचड़ीका उल्लेख ऊपर कर आये हैं, किन्तु यह उससे भिन्न प्रकार की है। इसे बनानेके पूर्व शालपर्णी, अतिबला, रेणुका-बीज इन औषधियोंका काढ़ा बना लें। इसके उपरान्त शीत-वीर्य मत्स्योंका अलग-अलग कषाय तैयार कर लें। इतना होनेके बाद सममाग दाल-चावलका मिश्रण भलीभाँति धोकर अँगीठीपर चढ़ा दें तथा उस पात्रमें जलके स्थानपर उपर्युक्त कषायोंका ही उपयोग करें। इस प्रकार बनायी गयी खिचड़ी अधोगत रक्त-पित्तका शीघ्र नाश करती है।

●

जब युद्ध-भूमिमें भगवान् कृष्ण नाचने लगे....!

आचार्य श्री बलराम शास्त्री, एम० ए०



[कुरुक्षेत्रके रणांगणपर कौरव-पाण्डवोंमें भयानक युद्ध चल रहा था। दोनों पक्षोंके कई महारथी सर्वदाके लिए सो गये थे। उसी समय एक दिन सहसा भगवान् कृष्ण युद्धभूमिमें ही अत्यन्त प्रसन्न हो अर्जुनके रथसे कूद पड़े और नाचने लगे। भगवान् कृष्णका यह कृत्य देख दोनों दलोंको अत्यन्त आश्चर्य हुआ। अर्जुन तो किंकर्तव्यमूढ ही हो गया और भगवान्का मुँह निहारने लगा। भगवान् क्यों नाचने लगे? उनकी कूटनीतिका रहस्य तो उसके फलसे ही ध्यानमें आता है। विश्वकी कूटनीतिसे सफल मुकाबला करनेके लिए भारतको, भगवान् कृष्णके अपनी रहस्यमयी कूटनीतिकी सफलतापर नाच उठनेका भेद समझना लाभदायक होगा।]

लाक्षागृहसे बच-बचाकर पाँचों पाण्डव माता कुन्तीके साथ विदुर द्वारा बताये मार्गसे आगे बढ़ें। दुर्योधनकी उस भयानक योजनासे उनके प्राण बच गये, जो नीतिज्ञ विदुरकी भव्य सफलता थी। पाण्डव एक घनघोर जंगलमें पहुँचे। थकावट, प्यास और निद्रासे व्याकुल हो रहे थे। यह देख भीम पासके किसी जलाशयमें पानी लेने चले गये। इधर थके पाण्डव माता कुन्तीसहित गहरी नींद सो गये।

वहीं एक भयानक घना शाल्मलीका वृक्ष था जिसपर 'हिडिम्ब' नामक राक्षस अपनी बहन 'हिडिम्बा' के साथ रहता था। भीम पानी लेकर आये तो सबको सोते देख पहरा देने लगे। हिडिम्बको मानवको गन्ध मिली। कुछ उचककर उसने देखा तो पासमें ही सोये कुछ मानव दीख पड़े। उसने अपनी बहन हिडिम्बाको समझाकर भेजा। 'जाओ, उन मानवोंको पकड़ लाओ, उनका मांस हम आनन्दसे भक्षण करें। बहुत भूख लगी है।' वह समझता कि ये मानव अचानक हमारे लिए भोज्य बनकर आ गये हैं।

भाईकी आज्ञा मान हिडिम्बा वहाँ पहुँची, तो आँखोंसे भीमसेनको देख उसके मनपर विपरीत ही प्रभाव पड़ा। भीमसेनकी विशाल काया उसके लिए कामोत्तेजक बन गयी। मायासे परम सुन्दरी बनकर वह भीमसेनके पास आयी थी कुछ करने और हो गया कुछ!

पहुँची, अतिप्रेमसे उनसे परिचय पूछा और सोये मानवोंके विषयमें भी पूछताछ की। वह अपनेको छिपा न सकी—भाईकी क्रूर भावनाओंके साथ अपना प्रेमभाव भीमके समक्ष व्यक्त कर ही बैठी। भीमसेन उसकी बातें चुपचाप सुनते रहे। अपना प्रेम-प्रस्ताव रखते हुए उसने आगे कहा : 'प्रियतम ! चारों भाइयों और माताजीको पीठपर चढ़ाकर मनचाहे स्थानपर सबको सुरक्षित कर दूँगी। आप सबको सुरक्षाका सारा भार मुझपर है। नहीं तो यह नरभक्षी राक्षस सबको खा जायगा।'

भीमसेनने कहा : 'सुन्दरी ! मेरे और मेरे भाइयों तथा माताजीकी चिन्ता न करो। भले ही तुम्हारा भाई बहुत बलवान् है, किन्तु उसके बलकी मुझे चिन्ता नहीं। उसका स्वागत है, आये और अपने बलका मुझे परिचय दे।'

हिडिम्बा और भीमसेनकी इस बातचीतसे विलम्ब देख कारण जाननेके लिए हिडिम्ब पेड़से उतरा और वहाँका दृश्य देख घबराया। अपनी बहनका दूसरा ही रूप देख वह सब कुछ समझ गया। वह पहले घमण्डी भीमसेनको उसके घमण्डका दण्ड देकर ही हिडिम्बाको दण्डित करना चाह रहा था। दोनोंमें द्वन्द्वयुद्ध छिड़ गया और उठा-पटक होने लगी। दोनोंकी भयानक गर्जनासे सभी जग गये। सुन्दरी हिडिम्बाने द्वन्द्व-युद्धका सारा रहस्य सबको अवगत करा दिया। अन्ततः भीमसेनने बाहुओंमें दबाकर हिडिम्बको मार डाला।

अब भीमसेनका ध्यान हिडिम्बाकी ओर गया। वे उसे भी दण्ड देना चाहते थे। किन्तु माता कुन्ती और महात्मा युधिष्ठिरने उन्हें रोक दिया। हिडिम्बाको तो भीमसेनके हाथों मारा जाना भी स्वीकार था। वह उनपर अतिमुग्ध जो थी। उसने भाईके मारे जानेका भी तनिक शोक प्रकट नहीं किया। वह अपनी सुध-बुध खो बैठी थी। अतएव सभीके सामने भीमसेनसे प्रेमसूत्रमें बँध जानेका प्रस्ताव करने लगी। उसने कहा : 'महाबले ! आपकी सेविका बनना चाहती हूँ।' भीमसेनके सम्मुख विचित्र समस्या थी। मर्यादाकी रक्षाके लिए माता और अपने ज्येष्ठभाईके सामने क्या कहते ? प्रेम-प्रस्ताव ठुकराते हुए पुनः उसे मारने दौड़े तो समझाते हुए युधिष्ठिर बोले : 'भीम, यह राक्षसी हमारा बिगाड़ ही क्या सकती है ? इसे मारना अधार्मिक कृत्य है।'

हिडिम्बाको कुछ कहनेका पुनः अवसर मिला, उसने कुन्तीसे निवेदन किया : 'आर्ये ! यदि आपके पुत्र भीमसेन मुझे अपनी अनुचरी बना लें, तो मैं आपके परिवारकी अपूर्व सेवा करूँगी। यदि यह नहीं होता तो मैं आत्महत्या कर लूँगी। मुझे आप अपने पुत्रसे विवाह करनेकी अनुज्ञा दीजिये। मानव और दानवोंका यह सम्बन्ध आपके परिवारके लिए अत्यन्त हितकर होगा। आर्ये ! मैं न तो यातुधानी हूँ और न निशाचरी। दानव यातिकी सुशीला कन्या और अभीतक अविवाहिता हूँ। मेरा नाम सालयकटंकटी है। अवसर पड़नेपर सर्वदा आप सबकी सहायिका सिद्ध होऊँगी।'

हिडिम्बाकी स्त्रियोचित भावना और उसकी हितकारी बातोंका प्रभाव पूरे परिवारपर पड़कर रहा। माता कुन्तीने अपनी स्वीकृति दे दी, पर युधिष्ठिरने यह शर्त रखी कि एक पुत्र हो जानेपर हिडिम्बा भीमका साथ छोड़ देगी।

हिडिम्बा और भीमसेनका गान्धर्व-विवाह हुआ और कुछ दिनोंतक वे अलग रहे। हिडिम्बाने 'घटोत्कच' नामक पुत्रको जन्म दिया। यह घटोत्कच महाबलवान् हुआ। बलवान्, मायाशास्त्रका विशारद और युद्धविद्यामें दक्ष हो गया। उसका प्रशिक्षण भीम और हिडिम्बा दोनों द्वारा हुआ। उसके बलकी इयत्ता नहीं थी। हिडिम्बाने अपने बलवान् पुत्रको अपनी प्रतिज्ञानुसार माता कुन्तीको सौंप दिया और वह अन्यत्र चली गयी। उसका भीमसेनके साथ रहनेका समय जो पूरा हो गया था। अपनी दादी कुन्तीके पास आकर घटोत्कच बोला : 'दादी! मैं महाबली और आपका हित चाहनेवाला, आपके पुत्रोंका सेवक हूँ। अवसर पड़नेपर आपके पुत्रोंकी सहायता करूँगा। आवश्यकतानुसार स्मरण करनेपर मैं आपके सम्मुख उपस्थित हो जाऊँगा। आपके परिवारकी सेवा कर अपनेको धन्य-धन्य मानूँगा।'

इतना कहकर आज्ञा लेकर वह उत्तर दिशाकी ओर चला गया। वह पाण्डवोंके लिए एक वरदान ही सिद्ध हुआ।

× × ×

कुन्तीको कुमारी-अवस्थामें सूर्यके प्रभावसे उत्पन्न कर्ण अपने स्वभावानुसार दुर्योधनके पक्षमें जाकर पाण्डवोंका विरोधी बन गया। पहले तो उसे यही पता न था कि उसकी माता कौन है और पिता कौन? अपने पालन-पोषणकर्ता दम्पती अधिरथ और राधाको ही उसने पिता-माता मान लिया था। वह बहुत बलवान्, तेजस्वी और महादानी था। कर्ण और अर्जुनमें आपसी दुश्मनी बढ़नेके ये ही सब कारण बने। दोनों एक ही माताके पुत्र थे, किन्तु आपससे विरोधी बन गये।

कर्णके कानोंमें कुण्डल और वक्षःस्थलपर कवच जन्मजात थे। ये उसके सूर्यपुत्र होनेके पितृप्रदत्त चिह्न थे। ये दैवी प्रभावसम्पन्न थे और इनके कारण युद्धभूमिमें कर्ण को कोई परास्त नहीं कर सकता था। भगवान् कृष्णको यह रहस्य ज्ञात था। पाण्डवों और कौरवोंमें युद्ध निश्चित हो जानेपर इन्द्रको भी कर्णसे भय उत्पन्न हो गया। अर्जुन इन्द्रके अंशसे प्रसूत थे। उनके प्रति इन्द्रका आकर्षण स्वाभाविक था। इन्द्रने मनमें विचारा—कर्ण दानी तो है ही, उससे दानमें कवच और कुण्डल ले लेने चाहिए।

इन्द्रका यह भाव सूर्यदेव ताड़ गये और उन्होंने स्वप्नमें कर्णको दर्शन देकर इन्द्रकी कपट-योजना समझायी और स्पष्ट आदेश दिया कि वह इन्द्रको कभी दानमें कवच और कुण्डल न दे। लेकिन कर्णको अपने दानीपनका घमण्ड और महत्त्व था। स्वप्नमें ही सूर्य भगवान्को कर्णने बता दिया : 'भगवन्, आपकी बातका मुझे पूरा विश्वास है, किन्तु मैं ब्राह्मणको कुछ भी अदेय नहीं समझता, चाहे मेरा जीवन ही दानमें क्यों न माँग लिया जाय। कवच-कुण्डल देनेसे चाहे मेरी कितनी भी हानि हो, किन्तु मैं दानार्थ आये ब्राह्मणवेषधारी इन्द्रको वापस नहीं जाने दे सकता।' कर्णकी प्रतिज्ञा और उसके दानका महत्त्व सूर्यदेवको भलीभाँति समझमें आ गया। अन्तमें उन्होंने समझाते हुए बताया। 'वत्स, यदि दानके नामपर तुम अपना कवच और कुण्डल देना ही उचित समझते हो, तो ब्राह्मणवेषधारी इन्द्रसे उनकी 'शक्ति' अवश्य माँग लेना।'

इन्द्रकी अमोघ शक्तिका रहस्य भी सूर्यदेवने कर्णको समझा दिया। इन्द्रकी शक्तिकी महिमा जानकर कर्णको बड़ी प्रसन्नता हुई और सूर्यदेव अन्तर्धान हो गये।

× × ×

युद्ध भयानक स्थितिमें पहुँच गया था। बहुतसे विख्यात योद्धा मारे जा चुके थे। इन्द्रदेव यथासमय कर्णका कुण्डल और कवच दानमें लेनेके लिए युद्धभूमिमें पधारे। कर्णने ब्राह्मणवेषधारी इन्द्रका यथोचित सत्कार किया। प्रसंगानुसार इन्द्रने कर्णसे कवच और कुण्डलकी याचना की।

कर्णने कहा : 'देवाधिदेव! मैं आपको पहचान गया। अपना कवच-कुण्डल आपकी सेवामें उपस्थित कर रहा हूँ। आप आज मुझे दर्शन दिये, अतः आपके दर्शनका फल भी मिलना चाहिए। वरदानमें कुछ दें।' इन्द्रदेवने कहा : 'वीरवर, जान गया कि सूर्यदेवने तुझे मार्ग दिखाया है। मुझसे जो माँगना चाहते हो, माँग लो।' कर्णने कहा : देवाधिदेव! कवच और कुण्डल निकालनेपर मेरे शरीरमें किसी प्रकारकी विकृति न हो। साथ ही बदलेमें आप मुझे अपनी 'शक्ति' प्रदार करें।' बहुत देर सोचनेके बाद इन्द्रदेव ने 'तथास्तु' कहा।

कर्णने तुरन्त अपने शरीरसे कवच-कुण्डल काटकर निकाले और इन्द्रदेवको समर्पित कर दिये। इन्द्रकी कृपासे कर्णके शरीरमें किसी प्रकारका विकार नहीं हुआ। इन्द्र भी अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार कर्णको अपनी अमोघ शक्ति तुरन्त प्रदान कर वापस चले गये।

इन्द्रकी वह शक्ति अतिबलशालिनी तो थी, किन्तु एक बार ही प्रयोगमें आनेवाली थी। पुनः दुबारा उसका प्रयोग नहीं हो सकता था, ऐसी ही दाताकी शर्त थी। फिर भी भयानकसे भयानक शत्रुका संहार करनेमें वह पूर्ण सक्षम थी। उससे एकबार समस्त संसार तकका संहार हो सकता था। इन्द्रकी वह महती सम्पत्ति थी, जो उन्होंने विवश होकर ही कर्णको दे दी। कर्णने उसे असमयमें प्रयोगके लिए सुरक्षित रख लिया।

× × ×

महाभारतके भयानक युद्धमें जब भीमपुत्र घटोत्कच अपना कौशल दिखाने लगे, तो उस समय कौरवोंका महासंहार प्रारम्भ हो गया। यद्यपि दुर्योधनकी ओरसे भी कई दानव लड़ रहे थे, किन्तु घटोत्कचके सामने किसीको टिकनेका साहस नहीं होता था। वनवासके अवसरपर ही अलायुध नामक दानवसे भीमसेनकी शत्रुता हो गयी थी। बकासुरको भीमसेनने युद्धके पहले ही मार डाला था। किर्मीर अलायुधका मित्र था और वह भी भीमसेनके ही हाथों मारा जा चुका था। हिडिम्ब अलायुधका सजातीय था। अलायुध भीमसे हिडिम्ब-वधका बदला लेनेके विचारसे दुर्योधनके पक्षमें हो गया। महाभारतके मैदानमें अलायुध और भीम-पुत्र घटोत्कचका युद्ध छिड़ गया जो महाभयानक सिद्ध हुआ। अन्तमें अलायुध भी घटोत्कचके हाथों मारा गया। उन दोनोंका युद्ध देखने देवता भी आ गये थे। दोनों समान बल-पौरुषके धनी और समान योद्धा थे। फिर भी घटोत्कचने उस दानवका काम तमाम कर दिया।

अलायुधके मरते ही दुर्योधनकी सेनामें खलबली मच गयी। कौरवराजकी आशाओंपर पानी फिर गया। उसे विश्वास था कि घटोत्कच को अलायुध ही मार सकता है। अलायुधको

मारकर घटोत्कच अत्यन्त उन्मत्त हो गया। अब दुर्योधनके पक्षमें घटोत्कचसे भिड़नेवाला एक ही वीर रह गया और वह था, कर्ण।

जब कर्ण और घटोत्कचका युद्ध प्रारम्भ हुआ तो महाभारतके मैदानमें पुनः हलचल मच गयी। घटोत्कच और कर्णका युद्ध 'द्वैरथ' युद्ध था। उस युद्धमें यह पता नहीं चलता था कि कौन अधिक बलशाली है? कर्णने एकबार घटोत्कचको भी विरथ कर दिया। उत्तरमें घटोत्कचने दुर्योधनकी सेनामें मायाका प्रयोग किया और मायाके युद्धमें कौरवोंकी सेना हताश हो गयी। उसी समय घटोत्कचने 'शतघ्नी' नामक अस्त्रका प्रयोग किया तो कौरवोंमें भगदड़ मच गयी।

कौरवोंमें हाहाकार देख कर्णको भी आवेश आ गया। उसने घटोत्कचपर अमोघ शक्ति 'वैजयन्ती' शक्तिका प्रयोग कर ही दिया। वास्तवमें कर्णने वह शक्ति अर्जुनपर प्रयोगार्थ सुरक्षित रखी थी, पर घटोत्कचके महासंहार-कारी युद्धके सम्मुख उसके मनकी बात मनमें ही रह गयी। घटोत्कच समझ गया कि अब मरना ही है। उसने चट मायाके बलपर अपना भयानक रूप बनाया। शक्ति लगते ही वह अपने आपको सम्भाल न सका। भयानक रूपवाला घटोत्कच जब भूमिपर गिरा, तो उसने लगभग एक 'अक्षौहिणी' सेनाको अपने शरीरसे दबाते हुए मार डाला और स्वयं स्वर्ग सिधार गया। घटोत्कचके मरते ही कौरवोंकी सेनामें हर्षकी लहर व्याप्त हो गयी तो उधर पाण्डवोंकी सेनामें भगदड़ मची। पाण्डवोंको जब पता चला कि घटोत्कच अब नहीं रहा, तो उनके लिए वज्रपात हो गया। अर्जुन, युधिष्ठिर आदि घटोत्कचके लिए पश्चात्ताप करने लगे और कौरव हर्षविभोर हो उठे।

× × ×

सबसे आश्चर्यजनक बात यह हुई कि भगवान् श्रीकृष्ण भी घटोत्कच-वधसे आनन्दविभोर हो गये। आनन्दातिरेकमें वे अर्जुनके रथसे नीचे कूद पड़े और उसीके सामने नाचने लगे। वीरवर अर्जुनकी आँखोंसे घटोत्कचके मरनेसे आँसू बह रहे थे। सभी पाण्डव शोकसंतप्त थे। उन्होंने भगवान्‌का वह रूप देखा तो सबके सब आश्चर्यचकित रह गये। अर्जुनने अपनी आँखोंमें आँसू भरकर उस दृश्यको देखा। उधर कौरवोंको भी बहुत आश्चर्य हो रहा था। किसीको भी कुछ समझमें भी नहीं आ रहा था। भगवान् श्रीकृष्ण नाचते हुए आगे बढ़े और अर्जुनको गोदमें उठा उनकी पीठ थपथपाने लगे। भगवान् हर्षमें कभी-कभी गर्जना भी करते जाते।

पाण्डव-पक्षके सभी योद्धाओं, वीरों, विचारकोंका आश्चर्य बढ़ता ही जा रहा था। किसीको कुछ समझमें नहीं आया। अन्तमें अर्जुन ये पूछ ही बैठे: 'मधुसूदन! हिडिम्बा-सुतके मारे जानेसे हम लोग तो शोकसन्तप्त हैं और आप अतिप्रसन्नतामें नाच रहे हैं! हमारी सेना भयभीत होकर भाग रही है और आप आनन्द मना रहे हैं! आपकी प्रसन्नताका छोटा-मोटा कारण तो हो नहीं सकता। जैसे समुद्रका सूखना और मेरु पर्वतका हिल जाना अति-आश्चर्यजनक है, वैसे ही आपका इस युद्धस्थलमें मेरे एक परमवीर योद्धाके मरनेपर नृत्य करना हमें आश्चर्यमें डाल रहा है। कृपया इस रहस्यको स्पष्ट करें?'

अर्जुनको अत्यन्त हताश देख भगवान् कृष्ण अपनी यथावत् स्थितिमें आकर बोले : 'अर्जुन ! मेरी महती प्रसन्नताका कारण सुनो। देवराज इन्द्रने कर्णसे कुण्डल-कवच दानमें माँग लिये। कारण कवच-कुण्डलधारी कर्ण तुमसे और मुझसे कभी भी न मारा जाता। लेकिन इस दानका मूल्य उन्हें अपनी 'वैजयन्ती शक्ति' देकर चुकाना पड़ा। वह शक्ति इतनी अमोघ थी कि महान्‌से महान् योद्धाको समाप्त कर सकती थी। उसे कर्णने तुमपर ही चलानेके लिए सुरक्षित रख छोड़ा था। कर्णके पास वह शक्ति थी, किन्तु मुझे सर्वदा चिन्ता रहती कि न जाने कब कर्ण उसे तुमपर प्रहार कर दे। उसके चलनेपर तुम्हारा प्राण उबरना कठिन हो जाता। उसके रहते मेरा 'सुदर्शन-चक्र' भी तुम्हें बचा न पता। किन्तु आज वह शक्ति घटोत्कचपर चली और उस वीरके मारे जानेसे पाण्डवोंकी हानि अवश्य हुई। फिर भी एकबारगी उस शक्तिके प्रयोगका वरदान इस तरह पूरा हो जानेसे अब तुम्हें कोई भी मार नहीं सकता। यही नहीं, अब कर्ण भी मारा जा सकता है। हाँ, अब भी कर्ण आसानीसे नहीं मारा जा सकता। उसके मारनेकी विधि समझ लो। जब उसकी अन्तिम घड़ी आयेगी तो उसके रथका पहिया जमीनमें धँस जायगा। जब यह स्थिति आये तो तुम मेरे संकेतसे उसपर आक्रमण कर देना, तब उसका संहार हो जायगा। अपनी दूरगामी कूटनीतिके यह भव्य सफलता देखकर ही आज मैं प्रसन्नतामें नाच रहा हूँ। इस रहस्यको मेरे अतिरिक्त अन्य कोई नहीं जानता।'

●

पथिकसे



साध्वी श्री राजमतीजी

फूलने पथिकसे कहा : 'पथिक फूल चुननेके लिए मत ठहर। अविचल साधनाके लिए चल। तेरे मार्गमें फूल खिलते ही रहेंगे।' मधुर कलरव करते हुए पक्षियोंने कहा : 'यात्री ! साध्यकी रट लगाता जा। ऐसा न हो कि दिशाशून्य होकर कहीं पथभ्रष्ट होना पड़े।' पथमें खड़े वृक्षोंने कहा : 'प्रिय ! जगत्‌के मोहबन्धन तुझे बाँधनेको तैयार है। कहीं ऐसा न हो कि मेरी तरह तुझे भी गतिहीन होकर पथमें खड़े-खड़े मौन-साधना करनी पड़े।'

पथमें बिछे शूलोंने कहा : 'यात्री ! बड़ी सावधानीसे चल। इस पथमें होनेवाली भूलें भविष्यमें तेरे हृदयको कुरेदती रहेंगी। याद रख—यह प्रगतिका प्रथम चरण है। इस पथको पार करनेके बाद तेरे मार्गको आघात आनेवाली नहीं। अटल विश्वाससे चल।' लहलहाती कलियोंने कहा : 'पथिक ! प्राणोंका मोह पथके लिए व्यामोह है। खिलना और सिकुड़ना जीवनका प्रतिरूप है। प्रतिपल हँसते रहना ही जीवन है।'

●

सृष्टि-काव्य

मैंने कवि की कवितामें, उस कविको ही मुसकाते देखा,
महाकाव्यके कलाकारको, अतुका छन्द बनाते देखा।

१.

आद्य-चरणको, काव्य-चरणमें, पीर-हरणको चीर-हरणमें,
विश्व-शरणको भारत-रणमें, छिपकर स्वकर बढ़ाते देखा।
गोकुलवासी बाल-गोपको गोकुल-नव्य बसाते देखा।।

२.

गिरिवरको निज गिरिखण्डोंमें विटपोंको अपने बीजोंमें,
जलनिधिको निज जलद-कणोंमें लघुतम रूप बनाते देखा।
कुम्भोद्भव मुनिके करतलमें अम्बुधिको लहराते देखा।।

३.

दिनकरको प्रतिदिन निज दिनमें शशिको अपनी शीत किरणमें,
दीपकको निज दीपशिखामें रश्मि-रूप इठलाते देखा।
मायावीको निज मायामें मैंने हिल-मिल जाते देखा।।

४.

विपिन-बिहारीको विग्रहमें, विश्वम्भरको विमल हृदयमें,
माधवको मुरलीकी लयमें मधुमय रास रंचाते देखा।
मैंने छायावादीको निज छायामें छिप जाते देखा।।

५.

मनमोहनको मन-मोहनमें, चिन्मयको निज मृण्मय तनमें,
आत्मतत्त्वको अपनेपनमें आत्म-सात् हो जाते देखा।
राम-कृपासे रामनामको रामरूप बन जाते देखा।।

६.

साधन-तत्त्व साध्यकी स्मृतिमें समाधान सब अपने ही में,
मानव-सेवा-संघ सुनममें प्रीत सुरभि फहराते देखा।
'लाल कन्हैया' शरण-शरणमें सद्गुरु-शरण संतको देखा।।

श्री कन्हैयालाल दूगड़

आज भी भारत-भूमि पर :

महाभारतकी आदर्श नारी

श्री गो० न० वैजापुरकर



हालके भारत-पाक-युद्धके सफल नेतृत्वने जहाँ हमारी प्रधानमन्त्रिणी श्रीमती इन्दिरा गांधीके व्यक्तित्व तथा भारत राष्ट्रके गौरवको वीरव्रती देशोंकी पंक्तिमें प्रमुख पदपर विठा दिया, वहीं भारतीय नारीका युद्धमें महत्त्वपूर्ण स्थान भी घोषित कर दिया ।

वैसे महारानी लक्ष्मीवाई झांसी, वीर दुर्गावती, चांदबीबीने प्रत्यक्ष समरांगणमें उतरकर नारीका शौर्य-तेज दिखा सदाके लिए भारतका मुख उज्ज्वल कर दिया है । किन्तु वैदिक-कालके वादके चिरन्तन महायुद्ध कुरु-पाण्डवोंके महाभारत-कालसे **रूपयौवन-सौभाग्यं स्त्रीणां बलमनुत्तमम्** माना जाने लगा और आम तौरपर नारी युद्धके लिए साक्षात् अयोग्य मानी जाने लगी । यह सही है कि उस समय भी कठिन प्रसङ्ग आनेपर स्त्रियाँ रणमें उतरती ही रहीं । नरकासुरके वधमें श्रीकृष्णके लिए **सत्यभामा-सहायवान्** विशेषण ही इसका संकेत करता है । भीष्म-परशुराम-युद्धमें भीष्मकी माता गङ्गा परशुरामका अप्रतिहत पराक्रम जान पुत्रके रक्षार्थ स्वयं रणांगणमें उतरी थीं और भीष्मके मूर्छित होनेपर उनके रथकी निगरानी करती रहीं । सुभद्राका अपहरणकर लौटते समय कृष्णको वृष्णि-यादवोंसे जो युद्ध करना पड़ा तो रथसंचालन सुभद्रा ही करती रही । इसी तरह चित्रांगदा, उलूपी, दुःशला आदि कितनी ही नारियाँ समरांगणमें उपस्थित हुईं । किन्तु ये सभी साक्षात् युद्ध नहीं लड़ीं, वरन उसमें तरह-तरहकी मदद देती रहीं । इस तरह स्त्रियोंके लिए युद्धस्थल-गमन कभी वर्ज्य नहीं रहा ।

यह तो स्पष्ट और निस्सन्देह कहा जा सकता है कि भारतीय नारियाँ कभी भी युद्ध-भयसे पति-पुत्रोंको धर्मयुद्धोंसे विरत करनेमें विघ्नरूप नहीं बनीं । प्रत्युत समर-मरणके लिए पुत्रोंको जन्म देनेका उनका क्षात्रव्रत ही सुख्यात रहा । इसीमें वे आत्मगौरव मानती थीं । भयसे युद्ध छोड़कर घर लौटनेवालोंका स्त्रीवर्गने सदैव उपहास किया और उसे मृत्युसे भी कठोर माना । विदुला जैसी तेजस्विनी माताने पराजित और युद्धसे भाग आये अपने पुत्रमें धैर्य, उत्साह और स्वाभिमान जगाकर उसे पुनः रणांगणमें भेजा । विदुलाने पुत्रसे स्पष्ट कहा

कि शत्रुके सिरपर मुहूर्तभर या क्षणभर जल उठो। प्राणोंकी आशा रखनेवाला क्षत्रिय चोर है।

ज्वल मूर्धन्यमित्राणां मुहूर्तमपि वा क्षणम्।
क्षत्रियो जीविताकाङ्क्षी स्तेन इत्येव तं विदुः॥

वह तो यहाँतक कहती है कि कोई भी स्त्री ऐसे पुत्रको न जने जो निरमर्ष और निरुत्साह हो:

निरमर्षं निरुत्साहं निर्वीर्यमरिनन्दन।
मा स्म सीमन्तिनी काचिज्जनयेत् पुत्रमीदृशम्॥

कंसकी स्त्रियोंने कंसवधके प्रतिशोधार्थ अपने पिता जरासन्धको अत्यधिक प्रेरित किया:

तत् त्वया न क्षमा कार्या शत्रुन् प्रति कथञ्चन।

सन्धि-कामुक पाण्डवोंको द्रौपदी ललकारती है।

धिग् बलं भीमसेनस्य धिक् पार्थस्य धनुष्मतः।
यत्र दुर्योधनः कृष्ण मुहूर्तमपि जीवति॥
यदि भीमार्जुनौ कृष्ण कृपणौ सन्धिकामुकौ।
पिता मे योत्स्यते कृष्ण वृद्धः पुत्रैर्महारथैः॥
पञ्च चैव महावीर्याः पुत्रा मे मधुसूदन।
अभिमन्युं पुरस्कृत्य योत्स्यन्ति कुरुभिः सह॥

माता कुन्ती युधिष्ठिरसे युद्धस्व राजधर्मेण कहकर भीम-अर्जुनसे कहती हैं कि जिस बातके लिए क्षत्रिया पुत्र पैदा करती हैं, वह समय आ गया है। ऐसा समय आनेपर प्राण भी त्याग देने चाहिए:

यदर्थं क्षत्रिया सूते तस्य कालोऽयमागतः।
काले हि समनुप्राप्ते त्यक्तव्यमपि जीवितम्॥

स्पष्ट है कि भारतीय नारियोंकी अपने पिता, पति, पुत्रादिकोंको युद्धार्थ यह प्रेरणा उस युद्धके धर्मयुद्ध होनेपर ही होती थी। जब अपर पक्षका अन्याय चरम कोटिपर पहुँच जाता, उनका सम्मान-सतीत्व खतरेमें पड़ जाता तो भारतीय नारियाँ इस प्रकार अन्यायसे प्रतीकारार्थ, आत्मसम्मानार्थ और प्रतिशोध लेनेके लिए धर्मयुद्धार्थ अपने पति-पुत्रादिको वीरताके साथ प्रेरित करती और वैर मिटानेके लिए बान्धवोंका मरण-दुःख भी प्रतिशोधको पूर्तिसे शान्त कर लेती थीं।

जिस तरह भारतीय नारी धर्मयुद्धार्थ अपने बान्धवोंको इस प्रकार प्रेरणा देतीं, उसी तरह अधर्म, अनावश्यक युद्धके निवारणके लिए भी टूट पड़ती थीं। पति-पुत्रके वधके बाद दुःशला दिग्-विजयार्थ आक्रमण करनेवाले अर्जुनके सम्मुख युद्धभूमिमें अपने बालक पौत्रको लेकर आती है और अर्जुनको युद्धसे विरत करती है। गांधारीद्वारा कौरवोंको कई बार अधर्मयुद्ध रोकने-

की बात महाभारतमें अनेक जगह हैं। भीष्म-परशुराम-युद्धसे पूर्व गङ्गाने भी युद्ध रोकनेका अथक प्रयास किया। युद्ध छिड़नेपर भी द्रौपदी और अन्य स्त्रियाँ परोक्षमें युद्ध रोकनेका प्रयत्न करती रहीं। कर्णको परपक्षसे फोड़कर युद्ध समाप्त करनेकी भावनासे ही कुन्ती बीच युद्धमें कर्णके पास गयी थीं।

युद्धके प्रसंगमें नारियोंकी सलाह भी बड़े महत्त्वकी रहीं। हिरण्यवर्माके आक्रमणके समय महाराज द्रुपदको उनकी रानी पार्षतीने ही धाड़स बँधाया और नगर-रक्षाके उपाय बताये। जबतक युद्ध चलता, स्त्रियाँ अपने-अपने घरों या शिविरोंमें निश्चिन्त और आलसी न बैठती थीं। युद्धका प्रत्येक वृत्तान्त जानकर परस्पर विचार-विमर्श और उपाय-योजना किया करती थीं। द्रौपदी, कुन्ती, गान्धारी युद्धके दैनिक वृत्तान्तसे सुपरिचित रहती थीं।

साक्षात् रणांगणमें आयुध लेकर न उतरनेपर भी स्त्रियाँ युद्धकालमें पुरुषोंके साथ युद्धशिविरमें जाकर रहती थीं। दुर्योधनके साथ कुरुस्त्रियोंका और पाण्डवोंके साथ दासी-परिवारसहित द्रौपदीके शिविरमें जा बसनेका महाभारतमें स्पष्ट उल्लेख है। प्रायः शिविरसे रणांगणमें जाते समय कन्याएँ योद्धाओंकी मंगलार्ति उतारतीं, बड़ी-बूढ़ी आशिष देतीं। दुर्योधन प्रतिदिन माता गान्धारीका अभिवादन करके ही रणमें उतरता। माता भी उसे यही आशीर्वाद देती : यतो धर्मस्ततो जयः। उसका आशीर्वाद सफल भी हुआ। प्रतिदिन सायंकाल युद्धबन्दीके पश्चात् शिविरमें लौटे योद्धाओंका गाने-बजानेसे मनोविनोद शिविरस्थ स्त्रियाँ ही किया करती थीं। राजकुलकी स्त्रियोंके साथ गणिकाएँ, दासियाँ भी शिविरमें रहतीं। युद्ध-समाप्तितक वे शिविरमें रहतीं और योद्धाओंकी हर प्रकारकी सेवा-सुश्रूषा और मनोरंजनमें सहयोग किया करतीं। सारा कौरवकुल नष्ट हो जानेपर ही कुरु-स्त्रियाँ रोती-गाती शिविरसे लौटीं, ऐसा महाभारतमें उल्लेख है। विजेताओंने युद्धशिविर-स्थित शत्रुस्त्रियोंकी कभी हत्या नहीं की। महाभारतमें असंख्य पुरुषोंके मरनेका उल्लेख है, पर एक भी नारीके वधकी चर्चा नहीं।

इस प्रकार चिर अतीतके महाभारत-युद्धके युद्धकालमें भारतीय नारी-शस्त्रपाणि न होती हुई भी परामर्श, सहायता, शान्ति-प्रयास, शौर्य-प्रेरणा आदि युद्धोपयोगी विविध कार्योंमें महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाती धर्मयुद्धको चलाती और अधर्मयुद्धको रोकती देखी जाती थीं।

भारतीय नारी इस तरह युद्धमें भाग लेकर ही भाग नहीं जाती थीं। प्रत्युत वे युद्धके खट्टे-मीठे फल भोगनेके लिए भी कमर कसकर तैयार रहती थीं। जिनके पति-पुत्रादि बान्धव विजयी होकर आते, वे नगरके पुरद्वारपर उनके स्वागतार्थ मंगलार्ति लेकर उपस्थित हो जातीं। उत्तरके अभिनन्दनार्थ उत्तराका ऐसा ही नगर-निष्क्रमण वर्णित है। पति-पुत्रों द्वारा जीते राज्यको वे स्वयं ही जीता हुआ मानती। जिनके बान्धव वीरगति पा गये, वे मृत्युकी अनिवार्यता और रणनिहतकी स्वर्गप्राप्तिकी कल्पना कर दुःखसहनकी शक्ति बटोरतीं। ऐसा करती हुई वे रोती-रोती ही जीवन नहीं बिताती थीं, वरन अपने भविष्यके कर्तव्यपर भी आरूढ रहतीं। राजाके मरनेपर राजपुत्र शिशु या बालक होनेपर वे उसे राज्यारूढ़ कर स्वयं उसका राज्य तबतक चलातीं, जबतक वह बालक इसके लिए समर्थ न हो जाता। युधिष्ठिरने

पाण्डवों एवं द्रौपदीके साथ महाप्रस्थान किया तो उस समय बालक परीक्षित्को राज्यपर बिठाकर सुभद्राको ही उसका पालन करनेको उन्होंने कहा। जहाँ कोई भी पुरुष सिंहासनार्ह नहीं रहा, वहाँ युधिष्ठिरको भीष्मने कहा : कन्यामभिषेचय—'कन्याको गद्दीपर बिठाओ।'

इसके अतिरिक्त भी युद्धके परिणाम नारीने भोगे। कुछ बन्दिनी की गयीं। कुछ कन्याओंके लिए विजेताओंने विवाहके प्रस्ताव रखें। उनके साथ जोर-जबर्दस्ती की। इस तरह वीर्यके मूल्यपर खरीदी गयी भी कन्याएँ प्रायः पातिव्रत्यका पालन करती रहीं। जैसे भीष्म द्वारा अपहृत विचित्रवीर्यकी स्त्रियाँ काशिराज-कन्यकाएँ। अन्यचित्ता अम्बाका जीवन तो दुःखान्त ही बीता। शाल्व और भीष्म दोनों द्वारा अस्वीकृत उसने आखिर तपस्या करके ही देह त्याग दी।

वैदिक-युगके बादके आजके युद्धसे बहुत-कुछ मेल खानेवाले भौतिकताबहुल महाभारत युद्धमें भारतीय नारीकी धर्मयुद्ध-लिप्सुता और अधर्मयुद्धकी अनासक्तिके प्रकाशमें जब हम आठ महीनोंके दानवीय असीम नरसंहार और कोटयावधि जननिर्वासनकी पृष्ठभूमिपर पाकके अधर्मयुद्धके विरुद्ध भारतीय नारी श्रीमती इन्दिरा गांधीकी धर्मयुद्धकी घोषणा देखते हैं और उसकी सफलताके साथ एकतरफा युद्ध विरामकी उनकी प्रसंगावधानतापर विचार करते हैं, तो कहना पड़ता है कि आज भी महाभारतकी आदर्श नारीसे भारत रिक्त नहीं है और आशा करते हैं कि भविष्यमें भी रिक्त नहीं रहेगा। अन्तमें हम उसी भारतीय नारी-तत्त्वके प्रति अपनी निष्ठा व्यक्त करते हैं।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥
या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥



सहनशीलतावाला ऋषि श्रेष्ठ है या कृपालु धनवान् श्रेष्ठ है? ऐसा प्रश्न किसीने सादिकसे किया, तो आप बोले : 'सहनशीलतावाला ऋषि श्रेष्ठ है; क्योंकि धनवान् चाहे जितना भला हो, तो भी उसका मन लक्ष्मीके विचारोंमें अटका रहता है और तपस्वी ऋषिका हृदय ईश्वरके सदा विचारोंमें ही लगा रहता है।'

—जाफर सादिक

निगमामृत

(श्रीसूक्त)

११

कर्दमेन प्रजाभूता मयि संभव कर्दम।
श्रियं वासय मे कुले मातरं पद्ममालिनीम् ॥

कर्दम हो कमलाके सुपुत्र
प्रजा तुमसे, तुम सन्निधि आओ,
वास करो नित मेरे निवासमें
और यहाँ रमाको भी बुलाओ।
पङ्कज - मालिकासे परिमण्डित
सिन्धुजाका शुभ दर्श कराओ,
देव ! सदा मम विस्तृत वंशमें
आप बसो जननीको बसाओ ॥

१२

आपः सृजन्तु स्निग्धानि चिक्लीत वस मे गृहे।
नि च देवीं मातरं श्रियं वासय मे कुले ॥

ए हो सुनो जलके शुभ - देवता !
स्निग्ध पदार्थ यहाँ उपजाओ,
हे चिकलोत रमा-सुत सुन्दर !
मेरे निकेतनमें बस जाओ।
देवी दयामयी माता रमा यहाँ
दर्शन दें, जिस भाँति, बुलाओ,
और सदा उनका मन वंश-
परम्परामें शुभ वास कराओ ॥

सूक्ति-सुधा

बर्हापीडं नटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारं
बिभ्रद् वासः कनककपिशं वैजयन्तीं च मालाम् ।
रन्ध्रान् वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृन्दै-
र्वृन्दारण्यं स्वपदरमणं प्राविशद् गीतकीर्तिः ॥

नटवर-वेष केशदेशमें शिखण्ड-मौलि,
कानोंमें कुसुम कर्णिकारके सुहाते हैं,
काञ्चन-सा कान्तिमान् पीत-पटधारी कृष्ण—
माला वैजयन्तिका पहन छबि पाते हैं।
छिद्र मुरलीके कर अधर-सुधासे पूर्ण,
मधुर बजाते नारदादि यश गाते हैं,
निज पद-चिह्नसे परम रमणीय बने
वृन्दावन बीच ग्वाल-बाल संग जाते हैं ॥

श्रीकृष्ण जन्मस्थान-सेवासंघ मथुराके लिए देवधरशर्मा द्वारा आनन्दकानन प्रेस, ढुण्ढिराज, वाराणसी-१ से मुद्रित एवं प्रकाशित